

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182451

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No.

H82.08

Accession No.

H2874

Author

R. K. I.

Title

श्रीगणेशाय नमः ।

इन्द्रधनुष । 1958

This book should be returned on or before the date last marked below.

इन्द्र धनुष

(सात मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद एकाङ्की)

सम्पादक—

डा० रांगेय राघव,

विक्रेता—

वेनोद पुस्तक मन्दिर
हॉस्पिटल रोड , आगरा

प्रकाशक—
नव साहित्य मन्दिर
१२१६ बागमुजफ्फरखाँ,
आगरा ।

द्वितीय संस्करण
अक्टूबर १९५७
मूल्य १॥)

Checked 1968
Checked 1969

मुद्रक—
कैलाश प्रिंटिंग प्रेस,
बाग मुजफ्फरखाँ, आगरा ।

विषय-सूची

भूमिका

१—ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया	—डा० रामकुमार वर्मा	१
२—यह मेरी जन्म भूमि है	—श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'	२३
३—समस्या का अन्त	—श्री उदयशंकर भट्ट	४३
४—बा और बापू	—श्री रामनरेश त्रिपाठी	६२
५—देवताओं की छाया में	—श्री उपेन्द्रनाथ अशक	७६
६—स्ट्राइक	—श्री भुवनेश्वर प्रसाद	१०८
७—नाटक का प्रारम्भ	—डा० रांगेय राघव	११८



भूमिका

आज के युग में मनुष्य की यह प्रवृत्ति बहुत तीव्र है कि वह अपने समय का अधिक से अधिक लाभ उठाये। वह नाटक का आनन्द और समय की बचत दोनों ही बातें चाहता है। विद्वानों का मत है कि आधुनिक युग में एकाङ्की नाटकों को इसी प्रवृत्ति ने महत्त्व प्रदान किया है। यूरोप में ही नहीं हमारे देश में भी एकांकी ने अपने लिए एक स्थायी स्थान बना लिया है।

संस्कृत नाटक व एकांकी—नाटकों का प्रारम्भ कब से हुआ इस पर अभी एक मत स्थापित नहीं हुआ। भरत के नाट्यशास्त्र और शारदा-तनय के 'भाव प्रकाशनम्' में नाट्योत्पत्ति की कथाएं दी गई हैं। प्रस्तुत संकलन में 'नाटक का प्रारंभ' नामक एकाङ्की उन्हीं कथाओं पर आधारित है। इन कथाओं से इतना तो स्पष्ट है कि भारत में नाटकों का प्रारंभ सांसारिक चिन्ताओं को भुलाने—मन बहलाव—तथा उपदेश आदि द्वारा नैतिक स्तर उठाने के लिए हुआ। आरम्भ में इसका रूप नैतिक व सामाजिक उत्सवों में सम्मिलित गायन नृत्य के रूप में रहा होगा और बाद को सम्वादों व अभिनय के समावेश से रंगमंच पर जाने जाते रहे होंगे। भरत मुनि के नाट्यशास्त्र में रंगमंचों के आकार सजावट का भी वर्णन मिलता है।

प्राचीन वैदिक काल से लेकर संस्कृत काल (छठवीं शताब्दी) तक भारत में नाटक बहुत प्रचलित व सम्मानित रहे। राजदरबारों में नाटककारों व प्रभिनेताओं का बड़ा सम्मान होता था। सुन्दर व विशाल रंगमंच बनाये जाते थे और संभ्रान्त कुल के लोग भी नाटकों में अभिनय किया करते थे। इसके भी उदाहरण मिलते हैं कि स्त्री पात्रों का अभिनय भी ही किया करती थीं। राजदरबारों में ही नहीं, जनता में भी नाटक के अनेक रूपों में खेले जाते थे। संस्कृत में हमें सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि सभी प्रकार के नाटक मिल जाते हैं। संस्कृत के प्रसिद्ध नाटककार कालिदास, भवभूति, भास, और हर्ष थे।

संस्कृत नाटकों के भेदों में अंक, भाण, वीथी, व्यायोग, प्रहसन

इत्यादि एकांकी के ही रूप हैं। ये रंगमंग पर खेले जाते थे और नाटकों के साथ इनका समाज में अच्छा मान था। महाकवि भास का 'उरुभंग' और नीलकण्ठ का 'कल्याण सौगंधिक' संस्कृत के प्रसिद्ध एकांकी हैं।

नाटकों के विकास के साथ साथ ही संस्कृत के आचार्यों ने लक्षण ग्रन्थ लिखे और इनमें नाटकों के विभिन्न रूपों को लक्षणों से बाँध दिया। उन्होंने यह निर्धारित कर दिया कि कौनसा रस नाटक में होगा, कैसे पात्र हो सकते हैं, किन किन परिस्थितियों को नाटक में दिखाया जा सकता है इत्यादि। इस प्रकार नाटकों का स्वतंत्र प्रवाह रुक सा गया।

दूसरी ओर देश में भी अशान्ति का वातावरण फैल गया। विदेशी आक्रमण से पैदा होने वाले वातावरण में नाटकों का खेला जाना संभव न था। साथ ही जो विदेशी जाति भारत में आई वह नाटक, नृत्य व संगीत आदि ललित कलाओं का विरोध करती थी। अब नाटकों के लिये न तो राजाश्रय था और न शान्तिपूर्ण वातावरण। फिर भी यह सत्य है कि संस्कृत नाटकों का काफी विकास हुआ और आज भी हम उनको सगर्व संसार के किंगी साहित्य के नमकक्ष रख सकते हैं।

यूरोप में एकाङ्की नाटक—पश्चिमी देशों में नाट्योत्पत्ति धार्मिक नृत्य और गीतों से ही हुई होगी। नाटकों का आरम्भ यूनान देश से माना जाता है। यहाँ के लोग अपने देव डाइयोनिसस को खुश करने के लिये गीत गाते और नाचते थे। इन गीतों में करुणरस की मात्रा अधिक रहती थी। इससे ज्ञात होता है कि इनके यहाँ करुणात्मक नाटक खेले जाते थे। साथ ही यूनानी हास्य नाटक का भी आरम्भ उत्सवों में मन बहलाव के लिए गाये जाने वाले गाने व नाच से हुआ। इन गानों व नाचों में हमारे देश की होली की तरह अश्लीलता अधिक रहती थी।

यूनान से यह नाटकों की परम्परा रोम पहुँची, लेकिन रोम में हास्य नाटक तो अपनाये गये, करुणोत्पादक गम्भीर नाटकों को वहाँ मदमत्त विजयी रोमन लोगों में कोई स्थान न मिला। यहाँ भी अभिनय कला पनप न पाई। इसके दो कारण थे। एक अभिनेता दास होते थे और

तीन

दूसरे नाटकों में केवल हास्य ही प्रधान था। आगे चल कर नाटकों के रूप में भी परिवर्तन आया। रात रात भर खेले जाने वाले नाटकों को देखने के लिए वहाँ लोगों के पास समय न था। इसलिए नाटकों में समय की बचत की जाने लगी।

प्रारम्भ में हास्य-प्रधान एकाङ्की नाटकों को 'कर्टनरेजर' Curtain raiser कहा जाता था। यह नाटक—भवन में पहले पहुंच जाने वाले दर्शकों के मनोरंजन के लिए किए जाते थे। यहीं से एकांकी नाटकों का जन्म माना जाता है। विद्वानों का मत है कि बड़े नाटकों के साथ जनता के मनोरंजन के लिए प्रस्तुत किये जाने वाले एक अङ्क के नाटकों से ही एकांकी का जन्म हुआ। अमेरिका व यूरोप में इसी तरह के एकांकी लिखे गये। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम काल में इन एकांकियों ने स्वतन्त्र रूप ले लिया और इनके लिए स्वतन्त्र नाट्यगृहों का निर्माण भी हुआ। अब इनके विषय में भी परिवर्तन हो चुका था। वे केवल हास्य प्रधान ही नहीं रह गये थे।

इनकी लोक-प्रियता का एक कारण यह भी रहा कि इन नाटकों पर केवल व्यावसायिक रंगमंच का सर्वाधिकार न रहा। एकांकी के लिए न तो विशाल रंगमंच चाहिये और न कीमती पोशाक व सामान। इनको तो जन-साधारण छोटे-छोटे रंगमंच बनाकर भी खेल सकता था। इनकी प्रसिद्धि बढ़ी और ये मनोरंजन के साथ-साथ सामाजिक सुधार व शिक्षा के भी साधन बन गये।

हिंदी साहित्य में एकांकी नाटक—हिन्दी साहित्य में नाटकों का आरम्भ भारतेन्दु से ही हुआ। इनके पहिले हिन्दी में नाटक नहीं लिखे गये। हिन्दी ने अपने जन्म से ही विदेशी आक्रमण को देखा और उतार चढ़ाव के वातावरण में वह विकसित हुई।

भारतेन्दुकाल में आकर कुछ सामाजिक व राजनैतिक स्थिरता आई और हमारे साहित्यकारों ने संस्कृत नाटकों से प्रेरित हो हिंदी में नाटकों की रचना की। आरम्भ में हिन्दी में संस्कृत नाटकों के अनुवाद हुए। भारतेन्दु ने संस्कृत एकांकी नाटकों की परम्परा के अनुसार ही प्रहसन

चार

लिखे। इनको भारतेन्दु ने रंगमंच पर भी खेला। लेकिन भारतेन्दु के साथ ही उनके ये प्रयास प्रायः लुप्त हो गये। हिन्दी में अपना स्वतन्त्र रंगमंच कायम न हो सका। केवल पारसी कम्पनियों में नाटक खेले जाते रहे।

इधर चित्रपट के आविष्कार ने तो रहा-सहा नाटकों का रूप भी खत्म कर दिया। अब अपने रङ्गमंच के अभाव के कारण पूर्ण नाटकों के लिये क्षेत्र न था। स्कूल और कालेजों में हिन्दी शिक्षा के प्रचार के साथ-साथ विद्यार्थियों के लिये इस प्रकार के नाटकों की आवश्यकता प्रतीत हुई जिसमें कम से कम सामान की आवश्यकता पड़े और कम समय में ही उसको तैयार किया जा सके, साथ ही यह अपने में पूर्ण हो तथा मनोरंजन, सामाजिक शिक्षा व सुधार का उत्तम माध्यम बन सके। दूसरी ओर कालेजों में अंग्रेजी शिक्षा के कारण उनके सामने उस साहित्य के एकांकी आये। इस पाश्चात्य प्रभाव और अपनी सीमित परिस्थितियों ने हिन्दी में एकांकी नाटकों को जन्म दिया।

इसलिए आजकल के एकांकी नाटकों की मूल प्रेरणा भारतीय न होकर पाश्चात्य है। हिन्दी साहित्य में इनका प्रवेश बहुत पुराना भी नहीं। पिछले पच्चीस वर्ष से ही इनका उदय हमारे यहाँ हुआ। फिर भी इतनी कम अवधि में यह हिन्दी साहित्य के प्रमुख व अनिवार्य अङ्ग बन गये हैं।

ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से हिन्दी एकांकी का इतिहास निम्न भागों में बाँटा जा सकता है—

१—भारतेन्दु व द्विवेदी युग। इस काल के लेखक सँस्कृत नाटकों से प्रेरणा लेकर लिखते थे। इनके मुख्य विषय इतिहास और समाज सुधार रहे हैं। नीलदेवी, अमरसिंह राठौर, व तीन ऐतिहासिक रूपक इस काल के मुख्य ऐतिहासिक नाटक हैं। समाज सुधार के विषय—बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, विधवा विवाह, व्यभिचार प्रवृत्ति, अंध भक्तिभाव आदि तथा आधुनिक सभ्यता का खोखलापन, रहे हैं। इस काल में भारतेन्दु ने सामाजिक कुरीतियों व अंधभक्तिभाव को लेकर सुन्दर प्रहसन लिखे हैं। इस काल के प्रसिद्ध एकाङ्की नाटककार भारतेन्दु, राधा-

पाँच

चरण गोस्वामी, प्रताप नरायण मिश्र, और काशीनाथ खत्री हैं। इस काल के अन्तिम दिनों में हिन्दी का प्रसिद्ध एकाङ्की प्रहसन 'चुङ्गी की उम्मेदवारी' लिखा गया। इसके लेखक श्री बद्रीनाथ थे। इस काल में सुन्दर प्रहसन और व्यंग्य की कोटि में आने वाले एकाङ्की लिखे गये।

२--जयशंकर 'प्रसाद' काल। इस काल का आरम्भ प्रसादजी के 'एक घूँट' नामक रचना (१९२६) से आरम्भ होता है और १९३५ तक माना जाता है। इस काल में फ्रांसीसी मोलियर के कुछ प्रहसनों के हिन्दी में अनुवाद हुए। लेकिन वे किसी प्रकार एकाङ्की के विकास में सहायक न हो सके। प्रसाद दूसरे लेखकों को कोई प्रेरणा न दे सके। 'एक घूँट' में उनका शिष्ट हास्य अपना ही उदाहरण बन कर रह गया। इसका कारण देश की तत्कालीन राजनैतिक व सामाजिक परिस्थिति व रंगमंचों का अभाव ही कहा जा सकता है। साथ ही प्रसाद जी का भुकाव 'एक घूँट' में संस्कृत नाट्यशैली की ओर अधिक था।

(३) आधुनिक काल। इस काल का आरम्भ श्री भुवनेश्वरप्रसाद के 'कारवाँ' (१९३५) से माना जाता है। कुछ विद्वानों का मत है कि इस काल का आरम्भ हमें राजकुमार वर्मा के 'चारुमित्रा' (१९४२) से करना चाहिए। लेकिन संस्कृत नाट्यशैली को छोड़, पाश्चात्य शैली की अपनाने वालों में भुवनेश्वरप्रसाद का 'कारवाँ' प्रथम था। इस संग्रह में भुवनेश्वरप्रसाद ने विवाह, स्त्री-समस्या व राजनैतिक समस्याओं को लेकर एकांकी लिखे। इस तरह पाश्चात्य शैली के साथ ही साथ इस काल में एकांकी नाटकों का विषय भी बदल गया। साहित्य के दूसरे क्षेत्रों की तरह यहाँ भी बुद्धिवाद का बोलबाला रहा। रामकुमार वर्मा और सेठ गोविन्ददास के एकांकी नाटकों में यह प्रभाव स्पष्ट रूप से झलकता है। इसी काल में नाटकों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण देने का भी चलन हिंदी में चला। विरोधी भावों या घटनाओं का सामँजस्य दिखलाना एकांकी का विषय बना। इस प्रकार के एकांकी का आरम्भ रामकुमार वर्मा के 'चारुमित्रा' से माना जा सकता है। १९४१ के बाद के लिखे गये एकांकी सुगठित रूप लेकर हिंदी में अवतीर्ण हुए। रामकुमार वर्मा, सेठ गोविन्ददास, उदयशंकर भट्ट, उपेन्द्रनाथ अश्व, विष्णुप्रभाकर, गणेशप्रसाद

छं:

द्विवेदी, भुवनेश्वरप्रसाद, हरिकृष्ण 'प्रेमी' आदि इस युग के प्रसिद्ध एकांकी लेखक हैं। इनके एकांकी नाटकों की विद्यार्थी वर्ग में अच्छी धूम रही और ये रङ्गमञ्च पर खेले गये। इनमें अभिनेय गुण की ओर विशेष ध्यान रखा गया था।

आज एकांकी नाटकों में एक ओर पुराने साहित्य से कथा प्रसंग लेकर नये रूप में प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति मिलती है तो दूसरी ओर लेखकों ने राष्ट्रीय व ऐतिहासिक आख्यानों से प्रेरणा भी ली। इनमें वास्तविकता को निभाने की ओर अधिक झुकाव रहा।

एकांकी नाटक का नाट्य-विधान—जैसा कि पहिले ही कहा जा चुका है कि आधुनिक एकांकी नाटक पश्चिम की देन है, इस कारण उसके नाट्य-विधान की मोटी-मोटी बातें जान लेना आवश्यक है। उनके यहाँ एकांकी के लिए आवश्यक तत्त्व हैं—

१—विषय की संबद्धता—जिस विषय को लिया गया हो उसके चारों ओर नाटक की समस्त घटनाये गुथी होनी चाहिये।

२—प्रभाव—सभी घटनाओं का प्रभाव मूल भाव को तीव्र बनाने वाला होना चाहिए। यदि सभी घटनाएँ अपना अपना प्रभाव डालेगी तो नाटक में शिथिलता आयेगी और वह अपने लक्ष्य में सफल न हो सकेगा।

३—वातावरण—उन्हीं उपकरणों तथा परिस्थितियों को नाटक में लाना चाहिए जो प्रभाव को स्पष्ट करने में सहायक हों।

इन्हीं तीनों गुणों को संकलनत्रय भी कहा जाता है।

पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि नाटक की रचना के लिए द्वन्दों का होना आवश्यक है। ये द्वन्द मानसिक भी हो सकते हैं और व्यक्तियों या घटनाओं के भी। इस प्रकार के विरोधी तत्त्वों का विकास और उद्घाटन ही नाटक का प्राण है। इसके लिये ही उन्होंने ६ अवस्थाओं का प्रतिपादन किया है।

१—व्याख्या—इसमें वर्ण्य विषय का परिचय दिया जाता है।

२—संघर्षमय घटना—यहाँ द्वन्द अपने विरोधी रूप में प्रगट होते हैं।

सात

३—संघर्ष का विकास—इसमें द्वन्द्व अपने पूर्ण रूप से प्रगट होते हैं और चरम सीमा की ओर अग्रसर होते हैं ।

४—चरम सीमा—यह वह अवस्था है जहाँ यह कहना सम्भव नहीं कि किसकी विजय होगी । संघर्ष अपनी अन्तिम हद को पहुँच जाता है ।

५—यह वह अवस्था है जहाँ अन्त का आभास मिलने लगता है और शक्तिशाली भाव कमजोर भाव पर हावी होता दिखाई देता है ।

६—अन्त—यहाँ आकर निश्चय रूप से एक की हार और दूसरे की विजय दिखलाई जाती है ।

इन नाटकों में अन्त तक तनाव बना रहता है और इससे नाटक की रोचकता में कहीं भी शिथिलता नहीं आने पाती ।

साथ ही नाटकों में भाषा, कथावस्तु, पात्र तथा सम्वादों पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है । सम्वाद तो नाटक की आत्मा कहे जा सकते हैं । जितने ही सम्वाद पात्रानुकूल होंगे नाटक में उतनी ही रोचकता पाई जायगी ।

एकांकी नाटक के प्रकार—आजकल कई प्रकार के नाटक लिखे जा रहे हैं । उनको गिनाना असम्भव ही है । फिर भी प्रसिद्ध ये हैं—समस्या प्रधान, घटना प्रधान, प्रहसन, व्यंग, ऐतिहासिक, इत्यादि ।

पूर्ण नाटक और एकांकी—दोनों का अन्तर उतना ही है जितना उपन्यास और कहानी का । इस दृष्टि से नाटक और एकांकी का अपना अलग अस्तित्व है । नाटककार के पास इच्छानुसार प्रभाव व वातावरण पैदा करने के लिए अवकाश भी होता है और क्षेत्र भी । लेकिन एकांकीकार का क्षेत्र बहुत ही संकुचित है । वह लक्ष्य की ओर तेज गति से चला जाता है ।

एकांकी और कहानी—इनका मुख्य भेद यह है कि कहानी पाठ्य है और एकांकी रंगमंच पर खेला जा सकता है । कुछ साहित्यिक एकांकी होते हैं जिनको रंगमंच पर खेला नहीं जा सकता, उनको कहानी की

कोटि में ही रखना चाहिए ।

एकांकी और रेडियो नाटक—रेडियो नाटक रेडियो स्टेशनों से प्रसारित किये जाते हैं और सुने जा सकते हैं । इनमें ध्वनि प्रधान होती है और ध्वनि के ही माध्यम से सभी प्रभाव देने होते हैं । यह कार्य रंगमंच पर खेले जाने वाले एकांकी नाटकों से कठिन अवश्य है । रंगमंच पर अभिनय तथा रंगमंच की सजावट आदि के द्वारा बहुत कुछ दर्शकों को स्पष्ट कर दिया जाता है, लेकिन रेडियो नाटकों में ध्वनि ही केवल मात्र सहारा है ।

एकांकी और सिनेमा—रंगमंच की सीमाओं ने एकांकी का क्षेत्र अभी तक बहुत सीमित कर रखा था । सिनेमा के आविष्कार ने इसके क्षेत्र को असीम कर दिया है । अब कोई भी दृश्य सिनेमा क्षेत्र से बाहर नहीं कहा जा सकता । पदों पर हर दृश्य पूर्ण वास्तविकता के साथ दिखलाया जा सकता है ।

एकांकी और सम्भाषण—कुछ लोग संभाषण को भी एकांकी ही मानते हैं । यह भूल है । सम्भाषण नाटक का एक अङ्ग माना है, पूर्ण नाटक नहीं । अभिनय के साथ ही जब सम्भाषण हो तभी वह नाटकीय प्रभाव डाल सकता है । रंगमंच पर अभिनय द्वारा बहुत सी बातें प्रगट हो जाती हैं जो लम्बे से लम्बे संभाषण द्वारा असंभव है । इस प्रकार एकांकी में उद्भव, इतिहास, विकास, रूप और प्रकार का विवेचन करते हुए हमने देखा कि एकांकी का भविष्य और भी अधिक उज्ज्वल है । हिंदी में जैसे जैसे इनके प्रति जनता की रुचि बढ़ती जा रही है लेखकों की नई प्रतिभा इसका भार वाहन करने के लिए अधिकाधिक अग्रसर होती हुई दिखलाई दे रही है ।

अन्त में मैं श्री काशीचरन पाण्डे को धन्यवाद देता हूँ जिनके अमूल्य परामर्श और सद् प्रयत्नों से मुझे इस संकलन को प्रतिनिधि स्वरूप देने में अत्यन्त सहायता प्राप्त हुई है । इस संग्रह के लेखकों को भी मैं धन्यवाद देता हूँ जिनकी अनुमति से यह कार्य पूरा हो सका है ।

ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया

—डा० रामकुमार वर्मा

डा० रामकुमार वर्मा, एम० ए०, पी० एच० डी०, हिंदी के प्रसिद्ध कवि, नाटककार और आलोचक हैं। आप हिंदी के अध्यापक हैं। आप ने अभी तक ५४ एकांकी नाटक लिखे हैं। आप के एकांकी नाटक विद्यार्थियों द्वारा सफलता पूर्वक खेले गए हैं।

डा० वर्मा सुकोमल भावनाओं के कवि हैं, इस कारण आपका कवि नाटक के संवादों में मुखर हो उठता है। आपकी उपमाएँ, शब्द चयन और वाक्य विन्यास कवि जनोचित होती हैं। हिन्दी में पश्चिमीय प्रणाली पर एकांकी लिखने वाले आप प्रथम नाटककार हैं। आपका मत है कि सम्पूर्ण नाटक आधुनिक साहित्य का सफल माध्यम नहीं बन सकता। आज की दशा में एकांकी नाटक सबसे अधिक शक्तिशाली माध्यम है।

प्रस्तुत एकांकी नाटक की पृष्ठ भूमि ऐतिहासिक है। इस नाटक में नाटककार ने 'संकलनत्रय' को बड़ी सफलतापूर्वक निभाया है। कबीर इसके मुख्य नायक हैं जो समस्त संघर्षों में अपनी विशेषता कायम रखते हैं। यहीउन की महानता है। यह नाटक आल इंडिया रेडियो द्वारा प्रसारित हो चुका है।

नाटक के पात्र—

पुरुष—

कबीर— हिन्दी के महाकवि और संत

रामानन्द— कबीर के गुरु और वैष्णव धर्म के आचार्य

नीरू— कबीर के पिता

नारायणदास—रामानन्द के भक्त; एक ब्राह्मण

मसुरियादीन } काशी के आडंबर प्रिय ब्राह्मण
बैजनाथ }

काजी— मुसलमानी धर्म के आचार्य

बकरीदी— काजी का मुरीद

रामानन्द के दो सेवक, कबीर के हिन्दू और मुसलमान शिष्य;

स्त्री—

नीमा— कबीर की माता

गौरी— नारायणदास की पुत्री

काल—पन्द्रहवीं शताब्दी

स्थान—बनारस

[तानपूरे पर दूर से आती हुई ध्वनि जो क्रमशः धीरे धीरे पास आती है ।]

भीनी भीनी बीनी चदरिया

काहे कै ताना काहे कै भरनी, कौन तार से बीनी चदरिया ।
इंगला पिंगला ताना भरनी सुखमन तार से बीनी चदरिया ।
आठ कवल दल चरखा डोले, पाँच तत्व गुन तीनी चदरिया ।
साईंको सियत माँस दल लागे, ठोक ठोक कै बीनी चदरिया ।
सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ि ओढ़ि कै मैली कीनी चदरिया ।
दास कबीर जतन से ओढ़ी, ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया ।

[धीरे धीरे ध्वनि दूर होती जाती है ।]

कथाकार—“दास कबीर जतन से ओढ़ी ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया ।” ये कबीरदास जी हैं । हिन्दी साहित्य के अमर सन्त और महाकवि । इनकी वाणी इतनी सरल और प्रभाव-शालिनी है कि वह प्रत्येक मुख की निवासिनी बनी हुई है । धर्म के अन्धविश्वासों को दूर कर इन्होंने पाखंड का विनाश किया और एक ईश्वर को सारे संसार का कर्त्ता समझा । इसलिए हिन्दू-मुसलमान और ब्राह्मण शूद्र में इन्होंने कोई भेद नहीं रक्खा । इनका यह नया धर्म ‘कबीर पंथ’ के नाम से प्रसिद्ध हुआ जिस पर हिन्दू और मुसलमान समान रूप से चले । कबीर साहब ने अपना शरीर इन्द्रियों के विषयभोग से बचाया और जैसे शिशु का शरीर निरीह और निष्काम रहता है वैसे ही जीवन के अन्त में अपना शरीर निरीह और निष्काम बनाकर इन्होंने उसे ईश्वर को सौंप दिया । ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया ।”

ये हैं महाभक्त कबीरदास जी । जन्म संवत् १४५५; माता पिता नीमा और नीरू, जाति के जुलाहे । इनके जन्म के सम्बन्ध में अनेक बातें कही जाती हैं । आइये, उनके आधार पर आप शिशु कबीर के दर्शन कीजिये ।

[घंटे और शंख-ध्वनि । साथ ही साथ बातचीत का हल्का शोर]
ब्राह्मण—हरि ओम्, हरि ओम्, क्यों भाई, महात्मा रामानन्दजी अपनी पूजा कर चुके ?

(कोई उत्तर नहीं मिलता । बातचीत का शोर हो रहा है ।
ब्राह्मण फिर पूछता है ।)

ब्राह्मण—महात्माजी अपनी सबेरे की पूजा कर चुके ? (शोर होता है और भक्त ब्राह्मण फिर पूछता है ।) भाई । सुनों, महात्मा जी की पूजा हो चुकी ?

एक सेवक—क्या नाम शे, तुम कौन हो जी ?

भक्त ब्राह्मण—अरे भाई, मैं नारायणदास ब्राह्मण हूँ । महात्मा जी के दर्शन चाहता हूँ ।

वही सेवक—अरे चिल्लाते काहे हो, क्या नाम शे । महात्मा जी के दर्शन यों ही थोड़े हो जाते हैं ? (व्यंग से) हाँ !

भक्त ब्राह्मण—मैं चिल्ला नहीं रहा हूँ, भाई ! बड़ी दूर से आया हूँ । साथ में मेरी बेटी भी है । दुखिया बेटी गौरी ।

वही सेवक—और सारे कुनवे को समेट कर ले आओ । क्या यहाँ खैरात बाँटी जाती है ? क्या नाम शे ?

दूसरा सेवक—ए 'क्या नाम शे' वाले ! ब्राह्मण-देवता को तंग क्यों कर रहा है ? जानता नहीं, ये महात्माजी के प्रिय भक्त नारायणदास जी हैं । महात्माजी कई बार इन्हें दर्शन दे चुके हैं । आइये नारायणदास जी, इधर ।

पहला सेवक—नारायणदास जी ? ओम् ! हरि ओम्, महात्मा जी के भक्त जी ! हैं, हैं, हैं । (बनावटी लज्जा) छिमा कीजिये । मैंने

पहचाना नहीं। क्या नाम शे। मैं नया ही नया आया हूँ।
क्या नाम शे।

नारायणदास—कोई बात नहीं पण्डित जी, (गौरी से) आग्रो, बेटी।
पहला सेवक—बेटी ? बेटी है, क्या नाम शे ? अहा बड़ी अच्छी बेटी
है। प्यास तो नहीं, बेटी ? जल लाऊँ, क्या नाम शे।

गौरी—नहीं महाराज, बैठने की जगह भर चाहिये। जल के लिए कष्ट
न कीजिए।

पहला सेवक—बात यह है कि बेटी ! स्वामी जी का शमय नष्ट करने
के लिए देश-विदेश से शैकड़ों अशज्जन लोग घेरे रहते हैं,
क्या नाम शे। अगर उनको दूर न किया जाये तो आप जैसे
राज्जनों का दर्शन दुर्लभ हो जाये, क्या नाम शे।

[नेपथ्य में शंख-घंटा की ध्वनि। एक पंडित का कथन]

महात्माजी की पूजा समाप्त हो चुकी। अब दर्शन होंगे। भाँकी
खुलती है।

(समवेत स्वर में)—महात्मा रामानन्द जी की जय।

अलग स्वर—महात्मा रामानन्द जी की जय।

[सब शान्त हो जाते हैं।]

रामानन्द जी—स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्त्यस्तु ते कुशलमस्तु, चिरायुरस्तु....

दूसरा सेवक—महाराज, कल्याणपुर से आपके परम भक्त नारायणदास
जी अपनी पुत्री सहित आपके दर्शन के लिये पधारे हुए हैं।

नारायणदास—महाराज ! मैं नारायणदास आपको प्रणाम करता हूँ।
मैं ही नहीं मेरे परिवार के लोग भी आपके दर्शनों के लिये
व्याकुल हैं। आप जैसे महात्मा का नाम जीवन के सभी
सन्तापों का विनाश करता है। यह मेरी पुत्री गौरी, दुखिया
गौरी, आज प्रातःकाल से ही आपके दर्शनों के लिए लाला-
यित थी। अभी हम लोग पैदल ही कल्याणपुर से आपके
दर्शनों के लिए चले आ रहे हैं। (गौरी से) गौरी महात्मा
जी को प्रणाम करो।

गौरी—महात्माजी के श्री चरणों में प्रणाम करती हूँ ।

रामानन्द—(गंभीर स्वर में) पुत्रवती भव ।

गौरी—(चीख भर कर) महाराज !

नारायणदास—महाराज ! (व्यथित स्वरों से) गौरी विधवा है । (वाद्य-यन्त्रकी तीव्र ध्वनि) महाराज । यह कैसा आशीर्वाद ! आपके श्रीमुख से । (वाद्य की तीव्र ध्वनि । उस पर नारायणदास की करुण ध्वनि तैरती हुई धीमी होती है ।) महाराज ! गौरी विधवा है ।....विधवा है । अब क्या होगा...! गौरी... गौर....गौरी...

कथाकर—लेकिन काल पाकर महात्मा रामानन्दजी का आशीर्वाद सफल ही हुआ और गौरी पुत्रवती हुई । यह पुण्य पुत्र भले ही महात्माजी के आशीर्वाद-मात्र से उत्पन्न हुआ हो किंतु समाज का भय तन-मन को कंपा देने वाला है । विधवा पुत्रवती कैसे हो सकती है ? समाज के सामने उसे सूखी बेल बनकर दिन प्रति दिन नष्ट होना चाहिए । बेचारी गौरी ने भी समाज के भय से अपने नवजात सुन्दर शिशु को काशी के लहरतारा तालाव के किनारे छोड़ दिया ।

गौरी—(सिसकियाँ लेती हुई) मेरे लाल ! तुम्हें यहाँ छोड़ दूँ.....? छोड़ कर चली जाऊँ ? पर कैसे जाऊँ मेरे लाल ! कहाँ तुम इतने सलोने और घरती इतनी कठोर ! कैसे सुलाऊँ तुम्हें इन काँटों पर । (सिसकियाँ) पालने में तुम्हें न भुला सकी तो हाथों में ही भूलो ।.....पर कब तक भुला सकूँगी, मेरे लाल ! दुनियाँ के सामने दुलार भी नहीं सकी, रोने पर तुम्हें चुपा लेने का सुख भी न पा सकी ! हाय ! इस अभागिना की गोद में खेलने में तुम्हें क्या सुख मिला ! मैं अभागिनी हूँ, हृत्यारिन हूँ, हाय ! महात्मा जी ने ऐसा आशीर्वाद ही क्यों दिया (जोर से सिसकी लेकर) क्यों दिया, मेरे लाल ! (सिसकियाँ) समाज के लिए.....पिता की लाज के लिए तुम्हें छोड़

दूँ ? यहाँ किसके सहारे छोड़ूँ ? तुम कहाँ कैसे रहोगे, लाल ! जिसे रात भर अपने आँचल में छिपा कर रक्खा उसे सबेरे भाड़ियों में सुला रही हूँ ! ईश्वर, मेरे लाल को अच्छे हाथों पहुँचाना । वह बड़ा हो, वह बहुत दिनों तक जिये, बहू लाये ! हाय, मैं यह सब सुख नहीं देख सकूँगी ।..... (रुक कर) यह कैसी आहट हो रही है ? सुबह कोई आ रहा है ! (बच्चे को सुलाती हुई) अब जा रही हूँ । मेरे लाल !... बहुत दिनों तक जियो एक बार तुम्हें फिर देख लूँ । मेरे ! लाल मेरे लाल ! (सिसकियाँ धीरे धीरे मन्द हो जाती हैं ।)

कथाकार—लेकिन इस अभागिनी माँ का यह लाल अकेला नहीं रहा । थोड़ी ही देर में उसी स्थान में होकर नीरू जुलाहा अपनी युवती पत्नी नीमा का द्विरागमन करा कर घर लौट रहा था ।

नीरू—मुँह खोलो, नीमा ! (मीठी हँसी हँस कर) शर्मीली लड़की ! धीरे धीरे सब लोग हमें यहाँ तक पहुँचा कर घर लौट गए । कितने अच्छे हैं तुम्हारे घर के लोग ! तुम्हारे भाई, तुम्हारे चाचा, तुम्हारे ताऊ, (गहरी साँस लेकर) सब लौट गए । अब कोई नहीं है । कोई भी नहीं है । लाज शरम को दूर करो । जरा मुँह खोलो, तुम्हें जी भर के देखूँगा । नी...मा...हाँ, नीमा, यही तो तुम्हारा नाम है । बड़ा प्यारा नाम है, नीमा ! नाम में ही थोड़ा इजाफा कर दिया, नीमा हो गया ! बाबा गोरखनाथ के नाम की तरह अच्छा नाम—नीमा । (नीमा दबी हुई हँसी हँस देती है ।) अच्छा, यह हँसी ? जरा मुँह तो खोलो ! देखूँ, तुम्हारा हँसता हुआ चेहरा कैसा लगता है ! देखूँगा निकलती हुई सूरज की किरन में और तुम्हारे चेहरे में कितना मेल है ।

नीमा—(कुछ नहीं बोलती ।)

नीरू—शर्मा गई ? देखो, यह सामोशी अच्छी नहीं । अरे, अब हमारी

तुम्हारी बातें सुनने के लिए यहाँ है ही कौन ? यह लहरतारा तालाब ? ये पेड़ ? ये फूल ? लेकिन नीमा, यह तालाब सिर्फ लहराना जानता है, पेड़ बढ़ना जानते हैं और फूल सिर्फ खिलना जानते हैं । सुनना कोई नहीं जानता । सिर्फ मैं जानता हूँ...नीरू...अच्छा नीमा, यह बात मुझे आज मालूम हुई कि हमारा तुम्हारा नाम एक ही हरफ से शुरू होता है । नीरू...नीमा...नीमा नीरू । कहो, कैसी कही ?

नीमा—(कुछ नहीं बोलती ।)

नीरू—अब भी खामोश ? अब तुम्हें बाबा गोरखनाथ की कसम । अरे, कुछ कहोगी, या सिर्फ कली की तरह मुस्कराती ही रहोगी ? और नीमा, एक बात तो और मजे की बात है । दुनियाँ के हर कारबार में एक और एक मिल कर दो होते हैं, लेकिन शादी के मामले में एक और एक मिलकर एक ही रहते हैं । है न ? एक और एक मिलकर एक । (एकाएक चौंककर आश्चर्य और कौतूहल से) अरे, यह किसका बच्चा पड़ा हुआ ? इस वक्त—किस बेदर्द ने इस बच्चे पर इतना जुल्म किया है ?

नीमा—(अटकते शब्दों में) बच्चा ? कैसा बच्चा ?

नीरू—(आगे बढ़ते हुए) बच्चा ही तो है, देखो इस भाड़ी में । अरे जिंदा है । मैं उठाऊँ...ठहरो उठाता हूँ । (बच्चा हाथ में उठाता है)

नीमा—(कौतूहल से) यह किसका बच्चा है, मेरे मालिक !

नीरू—न जाने किसका है । इतनी सुबह कौन यहाँ रख गया ? कोई तो नहीं दीख पड़ रहा है । ओ हो, कितना अच्छा बच्चा है ! (नीमा से) देखो, कितना सरूप है इसमें ! इसे कोई छोड़ गया है । हाय, बच्चे ! किसका कलेजा पत्थर का था कि तुझ जैसे फूल को भाड़ियों में उलझा गया है ! यहाँ कोई है भी तो नहीं जिससे पूछूँ कि यह किसका बच्चा है । (जोर से) अरे भाई ! यह किसका बच्चा है ! (कुछ क्षण बाद फिर जोर से) यह बच्चा कौन छोड़ गया है ?...कोई नहीं बोलता ! अब क्या करूँ ?

इसे इसी भाड़ी में पड़ा रहने दूँ !...लेकिन एक दिन भी तो यह नहीं रहेगा ! कोई भी जानवर हमला कर सकता है ! हाय, मेरे भोले बच्चे ! तुम्हें यहाँ कौन छोड़ गया है ? (नीमा से) नीमा ! यह तुम्हारी तरफ देख रहा है ।

नीमा—(उलझन से) तो मैं क्या करूँ ?

नीरू—अरे, तुम औरत होकर इसकी मासूमियत पर तरस नहीं खाती ? देखो न कितनी प्यारी आँखें ।

नीमा—आँखें तो सभी बच्चों की अच्छी होती हैं ?

नीरू—लेकिन इस बच्चे की आँखें कितनी भोली और मन को खींचने वाली हैं !

नीमा—हैं । (मौन रहती है ।)

नीरू—तुम्हारा मन... तुम्हारे मन में कुछ नहीं होता ? इसे देखकर...

नीमा—तुम क्या चाहते हो !

नीरू—मैं, मैं तो नीमा ! यह चाहता हूँ...कहूँ ?

नीमा—हां, कहो ।

नीरू—मैं तो यह चाहता हूँ नीमा !...अब कैसे कहूँ ।

नीमा—क्यों कहने में क्या हर्ज है ।

नीरू - तो कहूँ ? मैं चाहता हूँ.....यानी यह चाहता हूँ कि.....तुम इसे ले लो ।

नीमा—(चौंक कर) मैं ले लूँ ? क्यों ? किसलिए ? किसी दूसरे का बच्चा मैं क्यों ले लूँ ?

नीरू—(सम्हलते हुए) अरे, दूसरे का बच्चा होता तो आज इस तरह हमारे हाथ में होता ? मालूम होता है, बाबा गोरखनाथ चाहते हैं कि यह बच्चा हमारा हो ।

नीमा—यह कैसे मालूम ?

नीरू—कैसे मालूम ? तुमको मैंने कैसे पाया ? उस रोज मैंने तुम्हें पहली बार देखा, तुम मेरी हो गई ! बाबा गोरखनाथ के काम ऐसे ही होते हैं । जो चीज देते हैं, देना चाहते हैं, बिना पहले

बतलाये, आँखों के सामने ला देते हैं । इस बच्चे को कभी देखा था ? आज हमारे हाथ में है !

नीमा—लेकिन, मैं इसे कैसे लूँ ?

नीरू—चाहो और ले लो ! मोल-भाव तो करना नहीं ! अरे यह भी कोई कपड़े का थान है ! (हँसी) दुकानों-दुकानों पर फेरी लगाओ ! अरे, बाबा गोरखनाथ की तो एक ही दूकान है । देखो, और बिना मोल ले लो ।

नीमा—लेकिन मैं इसे ले कैसे सकती हूँ ?

नीरू—क्यों, मैं समझा नहीं ।

नीमा—(शर्मा कर) अब कैसे समझाऊँ ! तुम्हारे साथ पहली बार तो तुम्हारे घर चल रही हूँ ।

नीरू—तो ठीक है, बुरा क्या है !

नीमा—पहली बार चल रही हूँ और साथ में लोग यह बच्चा देखेंगे तो...तो....

नीरू—(जोर से हँसकर) ओहो, बड़ी पते की बात कही । अरे, मैं तो सब बातें जानता हूँ । लोग क्या कहेंगे । शर्मिन्दा तो मुझे होना चाहिए । जब मैं शर्मिन्दा नहीं हो रहा हूँ तो तुम्हारे शर्मिन्दा होने की बात कैसे उठती है ?

नीमा—मर्दों की शर्म ही क्या ! शर्म तो उनके तन तक ही रहती है । लेकिन औरतों की शर्म तो उनके मन की भीतरी तह तक छुपी रहती । मर्द तो बस शर्म से सिर झुका लेता है, औरत तो जमीन में गड़ जाती है ।

नीरू—(सिर हिला कर) हाँ, सच तो कहती हो तुम ! लेकिन नीमा, जाने क्यों इस लड़के को लेने की बात मेरे मन में आ रही है, मान जाओ न ! (बच्चे) इसे मना ले न !

नीमा—लेकिन सोचा न ! मैं घर जाऊँगी इसके साथ तो लाजों मर जाऊँगी ।

नीरू—मेरी अच्छी-अच्छी नीमा ! मैं कहता हूँ, जिन्दगी दुगुनी हो दुगुनी ! मुझसे रूठोगी तो मन बहलाने का बहाना हो जायेगा ! और फिर मैं गाँव वालों से सब बातें बतला ही दूँगा । रास्ते में पड़ा पाया इस बच्चे को ! इन्सान का धरम है, रहम करना । मैंने रहम किया, उठा लिया इसे । छोड़ देता तो तुम लोग ही कोसते और गालियाँ देते और फिर जिसको प्यारा है इसे ले ले ! अपना बच्चा इस आसानी से थोड़े ही दिया जा सकता है ! वस, लोगों को इतमीनान हो जायेगा !

नीमा—और इतमीनान नहीं हुआ तो ?

नीरू—तो...तो...अपने गाँव की किसी भाड़ी में डाल आना ।

नीमा—मुझ से भाड़ी में डालते न बनेगा ।

नीरू—अरे, तो मैं डाल आऊँगा । (बच्चे से) सुना बच्चे ! ये तेरी माँ जो बनने वाली है न ? कहती है कि तेरे साथ लाजों मर जाऊँगी । मैं कहता हूँ कि जी जायगी तेरे साथ ! लोग बात पर यकीन न करेंगे तो यह तुझे भाड़ी में फेंक आयेगी । या मैं फेंक आऊँगा ! तू भाड़ी में फिर सोयेगा ?...एँ ? अरे, तू तो हँसता है ! (नीमा से) नीमा ! देखो, यह कैसा अच्छा हँसता है ! हाय ! तुझे कुछ भी दया-मया नहीं ।

नीमा—बच्चा तो बड़ा भाग्यवान दीखता है ।

नीरू—तभी तो कह रहा हूँ तुझसे ! इसके साथ हमारा भाग भी चमकेगा ! रात दिन कपड़ा बुनते-बुनते थक जाता हूँ । आगे मदद हो जायेगी । बन जाओ न इसकी माँ ।

नीमा—सुबह सुबह यही होने को था !

नीरू—सुबह-सुबह न बनो, शाम से बनो इसकी माँ । शाम तक हम लोग घर पहुँच जायेंगे । कपड़े में लपेट लेंगे इसे । लोग समझेंगे, गौने की सौगत है ।

नीमा—गौने की सौगात कहेंगे तो मैं गंगाजी में डूब मरूँगी ।

नीरू—अच्छा, तो दान-धरम की सौगात सही । (बच्चे से) बाहू रे बच्चे ! तू भी बड़े अच्छे मौके से सौगात बन कर आया है ! बड़ा होशियार मालूम देता है । खूब मौका देखा इसने !

नीमा—हाँ, मौका तो खूब देखा !

नीरू—बाहू रे बाबा गोरखनाथ ! जाग मछन्दर, गोरख आया ! (नीमा से) सम्भाल इसे ! इसने तेरी खामोशी तो तोड़ी, नहीं तो तू तो बोलती ही नहीं थी ।

नीमा—(शिथिल स्वर में) मुझ से तो इसे ले के चला न जायगा ! थक गई हैं ।

नीरू—अच्छा तो, तू इसे अपने सिर पर रख और मैं तुझे अपने सिर पर रखूँ । तब तो चला जाएगा तुझसे ? (सम्मिलित हँसी)

नीमा—(शरमाते हुए) जाओ, तुम तो अभी से हँसी करने लगे ।

[दोनों की हँसी की आवाज]

कथाकार—इस प्रकार यह शिशु नीमा और नीरू से पोषित हुआ । इसी भाग्यवान शिशु का नाम रक्खा गया कबीर—जिसने गाया [तानपूरे की ध्वनि में...भीनी भीनी बीनी चदरिया]

कथाकार—कबीर बचपन से ही प्रतिभाशाली थे । इनकी रुचि धर्म पर विशेष थी । ये धूम-फिर कर लोगों को उपदेश दिया करते थे । लेकिन लोग इनके उपदेशों पर ध्यान नहीं देते थे क्योंकि ये 'निगुरे' थे । इनका कोई गुरु नहीं था । उस समय काशी में स्वामी रामानन्द की धूम थी ही । कबीर ने उन्हीं को अपना गुरु बनाना निश्चित किया । किन्तु स्वामी रामानन्द किसी शूद्र या विधर्मी को अपना शिष्य नहीं बनाना चाहते थे । कबीर ने उनके शिष्य बनने की एक युक्ति सोची । स्वामी रामानन्द जी ब्राह्म मुहूर्त में ही, जब काफी अन्धेरा रहता पंचगंगा घाट पर स्नान करने जाया करते थे । एक बार कबीर पंचगंगा घाट की सीढ़ियों पर लेट रहे । जब स्वामी

रामानन्द जी स्नान कर लौट रहे थे, राम-मंत्र पढ़ते चले आ रहे थे ।

[धीरे धीरे मंत्र पढ़ते हुए स्वामी रामानन्द की ध्वनि]

राम राम राम राम राम राम तारकं ।

राम कृष्ण वासुदेव, भक्ति मुक्ति दायकं !!

राम राम राम राम

[उनके पैर की ठोकर कबीर के सिर पर लगती है ।]

स्वामी रामानन्द -- (चीख कर) राम राम राम

कबीर—(एकाएक उठ कर)राम राम राम । यही गुरुमन्त्र है । महाराज, मैं हूँ कबीर । न जाने कितनी बार मैंने आपके शिष्य होने की बात सोची पर यह सुन कर कि आप शूद्र या विधर्मी को मन्त्र नहीं देगे, मैं बहुत दुखी होता था । आज आपने पैर से मेरे सिर को छू कर राम-राम कहकर मुझे मन्त्र दिया । आज से 'राम' शब्द ही मेरा मन्त्र है और आप मेरे गुरु । कान में फूँक कर नहीं, सिर को पैर से छूकर आपने ब्राह्म मुहूर्त में जो मन्त्र दिया है उससे मैं पवित्र होकर आपका शिष्य हो गया । (स्वर से)

राम का नाम संसार में सार है, राम का नाम अमृत गानी ।

राम के नाम से कोटि पातक टरे, राम का नाम बिस्वास मानी ॥

रामानन्द—तथास्तु—

कथाकार—इस प्रकार कबीर स्वामी रामानन्द के शिष्य बने । अब वे 'गुरुमुख' होकर अधिकार पूर्वक लोगों को सच्चे धर्म का उपदेश देने लगे । ये कर्मकाण्ड को संसार में उलझा देने वाला आडम्बर समझते थे । इन्होंने स्थान-स्थान पर इस संकीर्ण और सम्प्रदाय में बटे हुए धर्म की निन्दा की है । उनका धर्म तो विश्वव्यापी धर्म था जिसमें न हिन्दू हैं, न मुसलमान; न ब्राह्मण है, न शूद्र । सब एक ईश्वर की सन्तान हैं । और यह

कर्मकाण्ड ? यह तो धर्म के नाम पर किया गया व्यापार है ।
देखिए :—

एक —अरे ओ मसुरियादीन हो ! अब कासी जी माँ आयके कौनों पाप हमका जरकौ लाग नाहीं सकत । जनते हो कि ई कासी जी तीन तिरलोक ते न्यारी कही जात है । ई दुनियां के भीतर तो हइए नहि ना । जनते हौ, ई सिवजी के तिरसूल पर अस विराजमान है जैसे तुम्हार मुंडी पै ई चोटी, बिच्छू केर डंक अस ठाढ़ि है, समझ्यो न ?

मसुरियादीन—कासी जी केर महिमा तो न्यारी है, बैजनाथ गुरु ! हियाँ तौ सगर दुनिया भरभराइ कै आवत है । पूछी का बात ? तौ गुरु ! बात अस आय कै हियाँ गंगा जल माँ बूटी छानै तो अस सवाद आबत है कि जिमिया केर जलमै धन्न होइ जात है । मुला, ई आपन सवांग कस बनाए हो ? और एक बात पूछी ? जो तू आपन बार बढ़ाए की बात सोचत रहे, ओहिका का भवा ?

बैजनाथ—अरे मसुरिया कासी भर आय के जौन बार न बढ़ाए जाने ओही केर जलमै अकारथ । हमहूँ बढ़ाए जात रहे, मुर्दा का कही, ऊ हमरे जो चचा रहे न, अरे का नाव है भल भाई, ऊ बुलाखीलाल । उनका अवहिन मरे का जल्दी परी रही । ऊ खिसकेन और हमार बारौ साथ सरपेट लिहिन । मुदा जाय दो, बार तो आपन बढ़िन जात है ।

मसुरिया—ऊ तो ठीठ है, मुदा ई सवांग ?

बैजनाथ—अरे मसुरिया, तू कासी जी माँ आय के लंठे रहे । अरे ई जो कंठी है न ? यहि माँ सगरबरमहाण्ड गुरियन क रूप धइ के हमार गरे माँ विराजमान होई रहेहन । ई जौन रामनामी दुपट्टा कांधे पै परा है यहि माँ तौ जानौ राम सीता के भाँवरिन पड़ रहे है । औ का ? और जो पूछौ कि भरटि क ई छर्खा खंदन काहे लगाये हौ तो मसुरिया ई तौ जैसे सरग निसेनिन

हमार भाग माँ आय के उलरी अहै । जब चाहै तब यहि कै
ढाढ़ी लेव और आपन सरग माँ घंस जाओ । हाँ !

मसुरिया—वाह वा ! गुरु बैजनाथ ! औ ई गुदरिया !

बैजनाथ—ई गुदरिया ! अरे यहि माँ अरथ, धरम, काम, मोच्छ सबबै
सिमिटियान हैं । यहि क लेय के बरे चेला लोगन हमार गाँजा
क चिलम न भरि हैं ? कौन राम, और कौन बिसनाथ ?
हमार सरूप देख कै तो हम ही बाबा बिसनाथ कै सरूप
जान पड़ित हैं । फिर मसुरिया ! कन्चन औ कामिनी तो
अस अर्राई कै है कि दूनी हाथन ते लूटी तब्बौ न खतम
होई...ई...बात ! हाँ !

मसुरिया—गुरु, तुम्हार सतसंग मां तौ जान पड़त है मजै मजा है ।
आपन जयसङ्कर मँह से जपे जाव...चाहे मन माँ जौन
होय...

[कबीर साहब का प्रवेश]

कबीर—कौन ? ये ब्राह्मण ! भाई, यह सब स्वांग रखकर संसार को
ठगने का रास्ता तुम लोगों ने क्यों निकाला है ? तुम लोगों
के मन में राम का नाम का भाव कितना है, यह जानने की
कोशिश तुमने कभी की है । सीधे रास्ते पर जाओ । सुनो !
जाके राम न आवत हिये ।

काह भये नर कासि बसै से का गङ्गा जल पिये ।

काह भये नर जटा बहाये का गुदरी के लिए ॥

काह भयो कंठी के बांधे कहा तिलक के दिए ।

कहत कबीर सुनो भाई साधो, नाहक ऐसे जिए ॥

बैजनाथ—धन, धन, महाराज ! अहह ! मसुरिया हो ! कबीर साहब
क बात गङ्गा जल अस पबितर है । इन कर चेला होई कै
चाही । चलो ।

मसुरिया—चलो बैजनाथ, भैया !

दोनों—कबीर साहिब की जै...जै...

कथाकार—और इस प्रकार अनेक हिंदू इनके शिष्य हुए । मुसलमानों में भी जो आडम्बर था वह इनकी वाणी से दूर हुआ । देखिये:

काली—क्यों वे बकरीदी ! दस बार तुझ से मैंने कहा कि जब किसी मेले में जाया करे तो मुझ से पूछ कर जाया कर । पर तू पत्थर है पत्थर ! तेरे ख्याल में कोई बात आती ही नहीं । तू मेले में गया था ?

बकरीदी—मैं...मैं क्या कहूं, काजी साहब ! मैं जाना तो नहीं चाहता था लेकिन काजी साहब, मेरी बीबी ने जबर्दस्त...

काजी—काजी से ज्यादा बीबी की इज्जत है, क्यों बे ? और अगर भर गया था तो मुझसे तो पूछ लेता; काजी साहब को मेरे से कुछ मंगवाना तो नहीं है । या तू ही कुछ सोचकर अपने काजी साहब के लिए कुछ...

बकरीदी—काजी साहब ! पैसे...नहीं थे.....!

काजी—अबे, अपने लिये पैसे और काजी साहब के लिये पैसे नहीं । भूछा कहीं का ! पीरू तो कहता था कि बकरीदी अपने लिए बहुत बढ़िया बकरी और बकरा लाया है ।

बकरीदी—काजी साहब, बीबी नहीं मानती थी । कहती थी कि मियाँ, तुम्हारे नाम में तो बकरी है मगर तुम्हारे घर पर नहीं है । मैंने कहा कि बीबी ! ये तो माँ बाप का काम था कि अगर उन्होंने मेरा नाम बकरीदी रक्खा था तो साथ एक बकरी भी दे देते । दिया तो कुछ नहीं, लेकिन कहते हैं 'बकरी दी' ।

काजी—(हँसकर) हँसा कर गुस्सा दूर करना चाहता है । खैर ये सब बहाने चलने के नहीं । बकरी बकरा अच्छा ले आया । कल बकरीद है । तेरे बकरे की कुर्बानी होगी ।

बकरीदी—(घबरा कर) अरे-अरे काजी साहब ! आप यह क्या कहते हैं ! मैं मर जाऊँगा ।

काजी—मर जायेगा ?

बकरीदी—हाँ, काजी साहब, मर जाऊँगा । आप चाहें तो मेरी कुर्बानी कर दीजिये । लेकिन बकरे की कुर्बानी न करें ।

काजी—(हँसकर) तेरी कुर्बानी ! पागल हुआ है ! तेरी कुर्बानी क्यों करूँगा ? बकरे की करूँगा ।

बकरीदी—अरे, काजी साहब ! मुझ पर सितम क्यों ढा रहे हैं ? आप काजी साहब होकर ऐसी बातें करते हैं ?

काजी—अरे खुदा के नाम पर कुर्बानी होगी । तुझे सवाब मिलेगा ।

बकरीदी—काजी साहब, मुझे सवाब नहीं चाहिए । मैं मर कर सवाब नहीं चाहता ।

काजी—(दोहरा कर) मैं मर कर सवाब नहीं चाहता ? यह क्या बात ? मैं समझा नहीं ।

बकरीदी—अरे, उसमें समझने की क्या बात है, काजी साहब ! आप उसकी कुर्बानी करेंगे तो बीबी मेरी कुर्बानी कर डालेगी । काजी साहब ! बचाइये ! बचाइए ! खुदा के वास्ते बकरे को छोड़ कर कोई दूसरी चीज़ पसन्द कर लीजिए ।

काजी—(हँसकर) अच्छा, इस बार छोड़ता हूँ । लेकिन कल बकरीद है । मैं तो चाहता था कि गाय, लेकिन तू बकरे पर ही उलझ गया !

बकरीदी—हुजूर, बकरे की जिन्दगी से बकरीदी है, खुदा के लिए मुर्गी ले लीजिये ।

काजी—तू इतना गिड़गिड़ाता है तो मुर्गी ही सही । लेकिन अगले साल तुझे एक बकरा देना ही पड़ेगा । रोजे के बाद तो गोश्त का मज़ा है । अगले साल मुहल्ले भर में बकरीद में कुर्बानी होनी चाहिए ।

[कबीर का प्रवेश]

कबीर—कैसी कुर्बानी ?

बकरीदी—(अत्यन्त प्रसन्नता से कबीर के पैरों पर गिरकर) कबीर साहब ! कबीर साहब ! देखिए यं काजी साहब कुर्बानी के लिए मेरा बकरा लेना चाहते हैं ।

कबीर—उठो, उठो, बकरीदी ! (काजी साहब से) काजी साहब, इस कुर्बानी का हुक्म तुम्हें किसने दिया ?

मैं तोहि पूछौ मुसलमाना । लाल जरद का ताना बाना ।
काजी काज करौ तुम कैसा । घर घर जबह कराओ वैसा ।
बकरी मुरगी किन फरमाया । किसके हुकुम तुम छुरी चलाया ।
दरद न जाने पीर कहावै । बैता पढ़ि पढ़ि जग समझावै ।
एक कबीर एक सयद कहावै । आप सरोखा जग कबुलावै ।

दिन भर रोजा भरत हौ, राति हनत हो गाय ।

यह तो खून वह बन्दगी, क्यां कर खुशी खुदाय ।

काजी—वाह, वाह, कबीर साहब ! क्या बात कही है आपने ! आज से हम सब आपके मुरीद हुए ।

बकरीदी—वाह, कबीर साहब, वाह काजी साहब ! मेरा बकरा बचा और मैं बचा ।

कथाकार—इस प्रकार कबीर साहब ने अपने सच्चे धर्म-प्रचार से हिन्दू और मुसलमान दोनों को सही और सीधा रास्ता दिखलाया ।

[तानपूरे के स्वर में कबीर गाते हैं ।]

सन्तो राह दोऊ हम दीठा
हिन्दू तुरक हटा नहि मानें स्वाद सबन को मीठा ।
हिन्दू बरत एकादशि साधें दूध सिंघाड़ा सेती ।
अन को त्यागें मन नहि हटकें पारन करै सगोती ।
रोज तुरक निवाज गुजारें विसमिल बाँग पुकारें ।
उनको भिस्त कहाँ से होइ है सांभें मुरगी मारें ।

हिन्दू तुरक की एक राह है सतगुरु इहै बताई ।

कहहि कबीर सुनहु सन्तो, राम न कहेउ खुदाई ॥

[ध्वनि धीरे-धीरे क्षीण होती है ।]

कथाकार—जीवन भर कबीर अपने धर्म का उपदेश करते रहे । बहुत बड़ी संख्या में हिन्दू और मुसलमान उनके शिष्य हुए । साम्प्रदायिक भेद-भाव को दूर करते हुए उन्होंने सच्चे धर्म का सीधा रास्ता दिखलाया । जब इनका अन्त समय आया तो ये मगहर की तरफ रवाना हुए ।

एक शिष्य—गुरुदेव आप कहाँ जा रहे हैं ?

कबीर—कौन रामदेव ? मैं जा रहा हूँ मगहर । अब मेरा अन्तिम समय है ।

मुसलमान शिष्य—लेकिन मगहर में जाके आप क्या करेंगे ?

कबीर—मगहर में जाके मुझे मरना है, रहीम खाँ !

रहीम—अभी आपकी बहुत उमर है, साहब ! बहुत बरसों तक सलामत रहेंगे आप !

रामदेव—सच कहते हो, भाई रहीम ! अभी गुरुदेव हमारा साथ नहीं छोड़ेंगे ।

कबीर—नहीं रामदेव ! अब दूर देश को जाना है । रहीम खाँ, गम न करो । यह तो मव के साथ होता है । बहुत बरस तो जिया ।

अब अपना काम पूरा करके चला जाना ही है ।

रामदेव—लेकिन गुरुदेव, आप जीवन भर तो काशी में रहे । अब इस वक्त जा रहे हैं मगहर ।

कबीर—तो उससे क्या हुआ ? ईश्वर की छत्र-छाया में सभी जगहें एक-सी हैं ।

रामदेव—पर गुरुदेव ! आप जानते ही होंगे कि काशी में शरीर छोड़ने से मुक्ति मिलती है और मगहर में शरीर छोड़ने से.....

कबीर—(बीच ही में) गदह की योनि में जाना पड़ता है ? (बहुत जोर

से हँसने के बाद) अरे, अगर राम हृदय में है तो मगहर में मर कर भी मुक्ति मिलेगी ।

[गाते हुए]

मगहर मरे, मरन नहि पावै । अन्त मरै तो राम लजावै ॥

मगहर मरै तो गदहा होई । मत प्रतीत अस राखो कोई ॥

क्या काशी क्या मगहर ऊसर । राम हृदय बस मोरा ॥

जो कासी तन तजै कबीरा । रामैं कौन निहोरा ॥

कथाकार—इस प्रकार कबीर ने जीवन भर अपने विवेक से काम लिया और धर्म की रूढ़ियों को तोड़कर सच्चे और स्वाभाविक धर्म का प्रचार इन्होंने जनता के बीच किया । हिन्दू-मुसलमानों और ब्राह्मण-शूद्र का भेद दूर किया । संवत् १५५१ में उन्होंने अपनी जीवन-लीला समाप्त की और अपनी वाणी को ऐसी अमरता प्रदान की कि वह आज भी संसार के कोने-कोने में गूँज रही है ।

[तानपुरे में कबीर का गीत]

भीनी-भीनी बीनी चदरिया

सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ी ओढ़कै मैली कीनी चदरिया ।

दास कबीर जतन से ओढ़ी ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया ॥

[अन्त में ध्वनि धीरे-धीरे वायु में लीन हो जाती है ।]

यह मेरी जन्मभूमि है
हरिकृष्ण 'प्रेमी'

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि और नाटककार हैं। 'रक्षा बन्धन', 'बन्धन', 'स्वप्नभंग' आदि कई एकांकी नाटक लिखे हैं। आपके सामाजिक और ऐतिहासिक नाटक हिन्दी जगत में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। आपकी भाषा सरल और मुहावरेदार होती है। आपने नाटकों में गीतों को प्रमुख स्थान दिया है—यही कवि के लिये स्वाभाविक भी है। देशभक्ति और राष्ट्रीय भावना आपके नाटकों का प्राण है।

प्रस्तुत नाटक में जन्मभूमि के महत्व को दिखलाया है। मिस होम्स अंग्रेज सैनिक अफसर की पुत्री है, लेकिन जन्म भारत में हुआ और उसी को अपनी जन्म भूमि मानती है। देश के स्वतन्त्रता संग्राम में मिस होम्स भारतवासियों के साथ है और अपने प्राण तक की बलि देने के लिए उद्यत है। इस नाटक में जहाँ सम्वाद सजीव हैं, वहाँ उन्हें पात्रानुरूप रखने में भी प्रेमीजी सफल रहे हैं। नाटक अभिनेय है।

नाटक के पात्र

कर्नल होम्स—एक अंग्रेज सैनिक अफसर ।

मिस होम्स—कर्नल होम्स की पुत्री ।

रायसाहब सीताराम—एक अंग्रेज-भक्त देश-द्रोही रईस ।

गुलाम मुहम्मद—एक अंग्रेज-भक्त देश-द्रोही मुस्लिम ।

मनोहरलाल—रायसाहब सीताराम का पुत्र ।

वली मुहम्मद—गुलाम मुहम्मद का पुत्र ।

जुलूस की भीड़, सैनिक दल आदि

पहला दृश्य

[स्थान-कर्नल होम्स का बंगला । समय-दोपहर के दो बजे ।
कर्नल होम्स अपनी फौजी पोशाक पहन रहे हैं । कमरे की छत में लगा हुआ बिजली का पंखा तीव्र गति से घूम रहा है । कालेज से लौटकर बिजली-सी गति से कर्नल होम्स की २० वर्षीय लड़की मिस होम्स कमरे में प्रवेश करती है । कुछ बेचैन-सी जान पड़ती है । बड़ी भुंभलाहट के साथ पुस्तकें अलमारी में फेंक देती है और एक आराम-कुर्सी पर धम से पड़ रहती है ।]

मिस होम्स—ओह कितनी गरमी है ! मेरा तो सिर चकरा गया !!

कर्नल होम्स—यही तो इस मुल्क में खराबी है । यहाँ की आबोहवा आदमी की काम करने की ताकत छीन लेती है । ऐसी गरमी में भी हमें काम करना पड़ता है । तुम तो बेटी पसीने पसीने हो गई हो । तुमसे कितनी बार कहा, बेटी, तुम कार में बैठ कर कालेज जाया करो, लेकिन तुम पैदल ही जाती हो !

मिस होम्स—पापा, कार में बैठते हुए शर्म मालूम होती है । इस कड़ी गरमी में कितने ही आदमी सड़कों पर गिट्टी कूटते नजर आते हैं, कितने ही ऐसे लोग मिलते हैं जिनके बदन पर कपड़े नहीं हैं, सिर पर टोप तो क्या एक टोपी भी नहीं है, कितने ही ऐसे भिखारी बच्चे मिलते हैं जो एक पैसे के लिए एक-एक फर्लाङ्ग ताँगों के पीछे दौड़ते चले जाते हैं, पापा, ऐसे लोगों के बीच में मोटर में बैठकर कैसे जाऊँ ।

कर्नल होम्स—तुभ पर गांधी या लेनिन की छाया पड़ गई है । हाँ, यह तो तूने नहीं बताया कि आज कालेज से जल्दी क्यों लौट आई ?

मिस होम्स—कालेज के करीब-करीब सभी 'स्टूडेंट्स' की मर्जी थी कि आज जुलूस में शामिल हुआ जाय। दस-बीस लड़कों ने कालेज में बैठना पसन्द किया, बाकी चले आये। मैं भी चली आई।

कर्नल होम्स—क्यों ?

मिस होम्स—इसलिए कि मैं अपने हिन्दुस्तानी भाइयों का दिल दुखाना नहीं चाहती थी। आप इस गरमी में फौजी ड्रेस पहन कर कहाँ जाने की तैयारी कर रहे हैं ?

कर्नल होम्स—ड्यूटी पर ! आज काँग्रेस ने मिस्टर गाँधी की गिर-फ्तारी के विरोध में जो जुलूस निकालना तय किया है, कलक्टर साहब ने उसे न निकालने का हुक्म दिया है और काँग्रेस ने हुक्म न मानने पर कमर कसी है।

मिस होम्स—तो इसमें आप क्या करेंगे ?

कर्नल होम्स—हथियारों के जोर पर सरकारी हुक्म की पाबन्दी करूँगा। अगर सरकारी हुक्मों की बेइज्जती सह ली गई तो अंग्रेजों का राज्य यहाँ कैसे कायम रह सकता है ? अभी जुलूस निकलेगा, शाम को जलसा होगा जिसमें अंग्रेजी राज्य को उखाड़ फेंकने के लिये लोगों को बहकाया जायगा।

मिस होम्स—तो इसमें कानून के खिलाफ कौन सी बात है। हिन्दुस्तानी लोग अपना हक चाहते हैं। वे आजादी माँगते हैं।

[कर्नल साहब पूरी पोशाक पहन चुके हैं और कमरे में चहल-कदमी करने लगे हैं।]

कर्नल होम्स—हक चाहते हैं ! आजादी माँगते हैं !! इस आजादी का मतलब क्या है ? तुम जानती हो ? बेटी, हम अपने नहीं, इन हिन्दुस्तानियों के भले के लिये ही आये हैं। हमारा राज इस देश में अमन और कानून की हिफाजत करने के लिए है। तुमने हिस्ट्री पढ़ी है। तुम जानती हो हमारे आने के पहले यहाँ क्या हाल था ? मुसलमान, मराठे, राजपूत, ठग, पिंडारी

वगैरा ने लड़ाई, ठगी, डकैती से मुल्क बरबाद कर रखा था। हमने उन्हें अमन से रहना सिखाया है।

मिस होम्स—हमने उनकी जिन्दगी छीन ली है। उन्हें डरपोक और नामर्द बना दिया है। अमन और कानून की हिफाजत के नाम पर, तहजीब और तालीम के बहाने उनकी नसों में मौत का पानी भर दिया है। हमने धीरे-धीरे जहर दे-देकर उन्हें मौत के घाट पर पहुँचाया है।

कर्नल होम्स—तुम भी ऐसा कहती हो, बेटी !

मिस होम्स—हां, मैं भी ऐसा कहती हूँ पापा ! अंग्रेजों के बनाये हुए इतिहासों को पढ़कर नहीं, कालेज में जो नौजवान पढ़ते हैं, उनके चेहरों को, उनके रहन-सहन को देखकर कहती हूँ। वे विदेशी कपड़ों में, साहब ठाट में अकड़े हुए टेसू अपने-आपको मानो खुदा समझते हैं, लेकिन जिन्हें अपने मुल्क की गैरत नहीं, वे क्या इन्सान हैं, हमने इस देश के धन्ये छीन लिये, तालीम ने लोगों की धन्ये करने की आदत छुड़ा दी, वे नौकरियों के लिए दर-दर धूमने लगे, अब हम उन्हें जी चाहें जैसे नाच नचाते हैं। मुगलों ने इस देश को सिर्फ फतह किया था, मारा नहीं था, हमने इसे फतह नहीं किया, बल्कि मार डाला।

कर्नल होम्स—तुम्हारी बातें मैं नहीं समझ पाता बेटी।

मिस होम्स—आप फौजी आदमी हैं। आपने अपने दिमाग को आजाद होकर सोचने देने की तकलीफ नहीं दी, लेकिन मैं जो महसूस करती हूँ साफ-साफ कहती हूँ। मैं अंग्रेज लड़की हूँ, उस अंग्रेज कौम की जिसने आजादी के लिये अपने बादशाह के सिर को कलम कर देने में पाप नहीं माना। हमें कदर करनी चाहिए उन लोगों की जो अपने मुल्क को आजाद कराना चाहते हैं जो दुनिया में इन्सान बनकर रहना चाहते हैं। हमें

मुगलों के इतिहास से कुछ सीखना चाहिए, वे यहाँ हिन्दु-स्तानी बनकर रहे, यहाँ की दौलत को उठाकर तुर्किस्तान नहीं ले गए, उन्होंने यहाँ के वांशिदों को अपने बराबर दरजा दिया। वे यहाँ एक जान हो गए। पापा, क्या हम ऐसा नहीं कर सकते ? क्या हम हिन्दुस्तान की गरीबी दूर नहीं कर सकते ?

कर्नल होम्स—तुम्हारी तरह सभी अंग्रेज सोचने लगें तो कर्नल होम्स इंग्लैंड के किसी गाँव में मुर्गी पालते नजर आयें। लंकाशायर की फैक्ट्रीज पर नाले पड़ जायें। लन्दन के आस-मान को छूने वाले मकानात मिट्टी में मिल जायें। अपने घर को बरबाद करके दूसरों के घर को...

मिस होम्स—आजाद कैसे किया जाय ? यही तो आप कहना चाहते हैं। हमें इतना लालच क्यों हो कि उसके लिए हमें ४० करोड़ लोगों को दाने-दाने के लिए मोहताज बनाना पड़े ?

कर्नल होम्स—तुम तो ठीक हिन्दुस्तानियों की तरह बात करती हो !

मिस होम्स—हिन्दुस्तानियों की तरह ! मैं हिन्दुस्तानी नहीं तो क्या हूँ ? अंगरेज की बेटी हूँ लेकिन मेरा जन्म हिन्दुस्तान में हुआ है। यह मेरी जन्मभूमि है।

[राय साहब सीताराम का प्रवेश। सीताराम की आयु ५० से ऊपर है। आप शहर के धनी-मानी रईस हैं। हिन्दू-हितां के लिए प्राण देने की निरन्तर घोषणा करते रहने वालों में हैं। सरकारी क्षेत्रों में उनका प्रवेश और विश्वास है।]

कर्नल होम्स—आइए, राय साहब सीताराम !

[दोनों हाथ मिलाते हैं, पाम-पास कुर्सियों पर बैठते हैं। राय-साहब रुमाल से कपाल का पसीना पोंछते हैं।]

कर्नल होम्स—कहिए शहर की क्या हवा है ? जुलूस कैसा निकलेगा ?

राय साहब—जुलूस तो निकलेगा ? लेकिन...

कर्नल होम्स--लेकिन क्या...

राय साहब--वही जो मैं आपसे कह चुका हूँ। हम लोग अंग्रेजों जैसी हुकूमत के वफादार खादिम हैं। ऐसी चाल चलेंगे कि कांग्रेसी जिदगी भर जुलूस निकालने का नाम न ले। सच बात तो यह है, कर्नल साहब कि मैं तो दिल से हिन्दुस्तान में अंग्रेजों जैसी हुकूमत चाहता हूँ। जो लोग अंग्रेजों जैसी हुकूमत से छुटकारा चाहते हैं वे खुदकुशी करने पर आमादा हैं। उधर रूस, इधर जापान, एक भालू एक भेड़िया। उनके आगे गांधी की अहिंसा कैसे चलेगी? मैं तो हिन्दुस्तान की भलाई के लिए ही कांग्रेस का अन्त चाहता हूँ। अच्छा अब मैं जाना हूँ क्योंकि आप जानते ही हैं, मुझे अभी बहुत-कुछ करना है।

[सीताराम खड़े होते हैं। कर्नल होम्स भी खड़े होकर हाथ मिलाते हैं। राय साहब का प्रस्थान।]

कर्नल होम्स--देखा बेटी, इन्हीं लोगों की नुम वकालत करती हो ? इनकी आत्मा...

मिस होम्स-- उसे हमने मार डाला है। हमने इनकी इन्मानियन को खुदगर्जी के पहाड़ के नीचे दबा दिया है।

[एक ६० वर्षीय मुसलमान नेता का मफेद लंबी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए प्रवेश]

कर्नल होम्स--आइए, हाजी गुलाम मुहम्मद साहब !

[दोनों पास बैठते हैं]

कर्नल होम्स--अभी अभी राय साहब सीताराम यहाँ से गये हैं।

गुलाम मुहम्मद --जी हाँ, उनसे मुलाकात हुई थी।

कर्नल होम्स --क्या मुसलमान भी जुलूस में शामिल हो रहे हैं ?

गुलाम मुहम्मद--कुछ पढ़े-लिखे बेवकूफ, जिन्होंने कुछ रूसी किताब पढ़ ली हैं, या कुछ बेकार और गरीब लोग। अमीर मुसलमानों में से कोई भी कांग्रेस का साथ नहीं देगा। वे भी तो

मैंने सोच रखा है कि इस बार काँग्रेस को ऐसा सबक पढ़ाया जाय कि, खुदा कसम, लाख कोशिश करने पर भी फिर कभी मुसलमान उसके साथ न आयें ।

कर्नल होम्स—शुक्रिया ! अब हम लोग चलें ।

[कर्नल होम्स और हाजी गुलाम मुहम्मद का प्रस्थान]

मिस होम्स—(सहसा खड़ी होकर) कैसी खतरनाक साजिश है ! हिंदू और मुसलमान अपने ही मुल्क, अपने ही नेशन के खिलाफ बेईमानी क्यों करने चले हैं ? कुछ तमगों, कुछ खिताबों और बेईमानी से कमाई हुई जायदादों को कायम रखने के लिए ! इन्सानियत का सबसे ऊँचा खयाल है आजादी, सबसे पहिली ख्वाहिश है आजादी, सबसे प्यारी चीज भी है आजादी; उसे चन्द सिक्कों की खातिर ये बेच देना चाहते हैं । मैंने भी हिंदुस्तान का अन्न खाया है, क्या मेरा उसके लिए कोई फर्ज नहीं । जाऊँ, शायद कुछ कर सकूँ ।

[फुर्ती से प्रस्थान]

(पट-परिवर्तन)

दूसरा दृश्य

[राय साहब के मकान का सामने वाला हिस्सा । स्वयं-सेविकाओं का एक दल भगड़ा लिये गाता हुआ बढ़ रहा है । उनका पुत्र मनोहर-लाल विस्मय-विमुग्ध-सा यह दृश्य देख रहा है ।]

स्वयं-सेविकाओं का दल:—(सम्मिलित स्वर से)

हम भगड़े का मान रखेंगी !

धवल हिमालय की चोटी पर,
इसको फहरावेंगी फर-फर

इससे भूषित होगा घर-घर,
गूँजेगा आजादी का स्वर,
हम प्राणों में प्राण भरेंगी ।
हम भण्डे का मान रखेंगी ।

हमें रोकने वाले आवे,
गोली - गोले भी बरसावें,
हम ज्वाला को गले लगावें,
हँस हँस माँ पर प्राण चढ़ावें,
हम जननी की शान रखेंगी ।
हम भण्डे का मान रखेंगी ।

आजादी के गाती गाने
चली देश को आज जगाने,
आवें जननी की संतानें,
आजादी के बन परवाने,
मन-मन में तूफान भरेंगी ।
हम भण्डे का मान रखेंगी ।

[गाते-गाते दल का प्रस्थान]

मनोहर—कैसा प्यारा और पावन दृश्य है यह ! मेरे सोये हुए प्राण
भी मानो करवट बदलने लगे हैं । आँखों के आगे भारत का
गौरव-मय अतीत नाचने लगा है । कहाँ गया हमारा विश्व-
व्यापी साम्राज्य ? आज हमने अपने कंधों पर गुलामी का
जूआ लाद रखा है ।

[मोटर-ड्राइवर का प्रवेश]

मोटर ड्राइवर—बाबू साहब, मोटर तैयार है । रेस-कोर्स चलेंगे न ?

मनोहर—आज मैं नहीं जाऊँगा । मोटर को गेराज में छोड़ दो ।

[मोटर-ड्राइवर का प्रस्थान]

मनोहर—यह है हमारा जीवन ! जिस समय इस नगर के हजारों युवक-युवतियाँ, वृद्ध-वृद्धाएँ, बालक-बालिकाएँ राष्ट्रीय भण्डे के नीचे, सरकारी आज्ञा की अवहेलना करते हुए, अपने हृदय सम्राट महात्मा गाँधी के प्रति अपना आदर और विश्वास प्रकट करने के लिए जा रहे हैं, मुझे रेस-कोर्स जाने की सूझी थी। यही तो कारण है कि हम गुलाम हैं।

[बंगले में खानसामा का प्रवेश]

खानसामा—चाय तैयार है !

मनोहर—जाओ, मैं आता हूँ।

[खानसामा का प्रस्थान]

मनोहर—चाय तैयार है ! कैसा घृणित जीवन है हमारा ! हमारे दिल में देश के लिए जरा मा भी दर्द नहीं है। आज मेरे पास लाखों की सम्पत्ति है। मुझे अनुभव ही नहीं होता कि देश अभाव की आग में जल रहा है ! पर जब किसी स्वतन्त्र देश के युवक के सामने जाता हूँ तो मेरी आँखें नीची हो जाती हैं। मैं शर्म से जमीन में गड़ जाना चाहता हूँ। उस समय मुझे यह धन-सम्पत्ति-ऐश्वर्य अभिशाप जान पड़ता है। इन्होंने मेरे प्राणों को बाँध लिया है, मैं आज देश के स्वर-में स्वर मिला-कर आजादी का गीत भी नहीं गा सकता।

[मिस होम्स का प्रवेश]

मनोहर—ओहो, आप हैं, मिस होम्स ! आज इधर किधर भूल पड़ी ?

मिस होम्स—अक्सर आप भूल किया करते थे, आज मैंने भूल करने की ठान ली। आज कैसी खुशी का दिन है भाई मनोहरलाल आज आपके शहर ने इन्सानियत का सबूत दिया है। इन्सानियत के कानूनों के खिलाफ जो हुक्म है उसको न मानना गोली-गोलों की परवाह न करके जुलूस निकालने की हिम्मत

करना इस बात का सबूत है कि हमारा देश जल्द आजाद होगा ।

मनोहर—हमारा देश ! मिस होम्स, यह आप क्या कहती है ! यह आपका देश है ?

मिस होम्स—ओह, मैं अंगरेज के घर पैदा हुई हूँ, क्या इसीलिए हिन्दुस्तानी नहीं हूँ, अरे भाई जो जिस देश में रहता है वह उसी राष्ट्र का अंग है और फिर मनोहर भाई, अंग्रेज होकर भी क्या मुझे हिन्दुस्तानियों के खयालतों की इज्जत नहीं करनी चाहिए । मैं आपसे पूछने आई हूँ कि आज आप क्या कर रहे हैं ? देश में जो जोश की लहर उठ रही है उसने आपके दिल को हिलाया या नहीं ? मेरे साथ आप कई बार टेनिस खेले हैं, सिनेमा गये हैं, नावों पर सैर की है । मैं आपके दिल को जानती हूँ ।

मनोहर—क्या जानती हैं ?

मिस होम्स—यही कि उसमें भी दर्द है । गुलामी को जलाकर खाक करने की खाहिश है । लेकिन यह आग अभी छोटी-सी चिनगारी है । मैं उसे फूँक मारकर जलाने आई हूँ ।

मनोहर—आप मजाक करती हैं ।

मिस होम्स—आप मुझे दुश्मन समझते हैं, मनोहर ! अपने देश का दुश्मन समझते हैं ? बदकिस्मती है मेरी कि मैं अंग्रेज हूँ, एक फौजी अफसर की बेटी हूँ, लेकिन राय साहब सीताराम के लड़के मनोहरलाल में देश के लिए प्रेम हो सकता है, तो क्या कर्नल होम्स की लड़की में इन्सानियत नहीं हो सकती ? मैं आई हूँ, आपसे मदद लेने आपके पिताजी ने जो साजिश की है उसे नाकामयाब बनाने के लिए आपसे मदद लेने !

मनोहर—मैं जानता हूँ, पिताजी को स्वार्थ ने अन्धा कर दिया है । आज के जुलूस को विफल करने के लिए वे प्रयत्न कर रहे हैं । मैं अपने प्राण देकर भी प्रयत्नों को विफल करने को प्रस्तुत हूँ ।

मिस होम्स —शाबाश भाई मनोहरलाल ! हमें प्राणों पर खेलकर इस शहर की गलियों को हिन्दू-मुसलमानों के खून से रंगे जाने से बचाना चाहिये ।

[हाजी गुलाममुहम्मद के पुत्र वलीमुहम्मद का प्रवेश]

मिस होम्स —आप भी आ गये वलीमुहम्मद !

वलीमुहम्मद —जी हाँ, मिस होम्स ! मैं आपकी तलाश में था ।

मिस होम्स —मैं आपके यहाँ आने ही वाली थी ।

वलीमुहम्मद —खुशकिस्मती मेरी !

मिस होम्स —लेकिन भाई, आपके वालिद जो मुल्क की बदकिस्मती को बढ़ाने चले है उसका भी कोई इलाज सोचा है आपने ? वे जो अङ्गरेजों के हथियार बनकर मुल्क की आशाओं पर पानी फेरने चले हैं उसके लिए आप क्या करना चाहते हैं ।

वलीमुहम्मद —मुझे जो कुछ करना है मैं सोच चुका हूँ । मैं आपसे आखिरी सलाम करने आया हूँ । मैं मस्जिद में जा रहा हूँ । मेरे वालिद साहब ने जिन लोगों को वहाँ जमा किया है मैं उनके कदमों पर पड़कर इस्तदुआ करूँगा खुदा के नाम पर, इस्लाम के नाम पर अर्ज करूँगा कि वे शैतान न बने । मुस्लिम कौम पर आजादी की लड़ाई के रोड़े बनने के कलङ्क को न लगाने दें । गरीब मुसलमान अनपढ़ और भोले हैं । वे इन नवाबों और खानबहादुरों के चक्कर में पड़कर, उनकी गरीबी और गुलामी को मिटाने की कोशिश करने वाली कांग्रेस की मुखालफत करने लगते हैं । मैं उन्हें समझा दूँगा, मिस होम्स !

मनोहर —और अगर वे नहीं माने ।

वलीमुहम्मद —नहीं माने तो मैं उन लोगों के सामने अपने हाथ से कलेजे में छुरी मारकर मर जाऊँगा । इससे शायद वालिद साहिब की आंखें खुल जायं, शायद मुस्लिम कौम के बन्दे अपने दिल के भीतर भाँक कर सच्चाई को जानने लगें । मेरे

मरने के बाद शायद वे समझें कि आजादी की भी कुछ कीमत है ।

मेस होम्स—शाबाश वली मुहम्मद ! हम तीनों ही अपने बालदेन के खिलाफ बगावत करेंगे । चलो यहाँ से चलें ।

[तीनों का प्रस्थान]

(पट-परिवर्तन)

तीसरा दृश्य

[स्थान—मस्जिद के सामने का हिस्सा, कर्नल होम्स, मिस्टर सीताराम और मौलवी गुलाम मुहम्मद का बातें करते हुए प्रवेश]

कर्नल होम्स—इस शहर में पहले कभी इतना शानदार जुलूस नहीं निकला । यह जानते हुए कि आज जेल, लाठी और मौत का सामना करना पड़ सकता है लोगों का समूह उमड़ आया है । गाँधी के नाम में ही कुछ जादू है । इससे जान पड़ता है कि अंग्रेजी राज्य की तरफ से हिंदुस्तानियों के दिल फिर चले हैं ।

सीताराम—ऐसी बात नहीं है, कर्नल साहब । यह तो भूखे और बेकार लोगों का मजमा है और इनमें भी दृढ़ता नहीं है । यह जुलूस तो बुझने हुए चिराग की भभक है । महात्मा गाँधी ने अपने ऊपर जो धार्मिकता का आध्यात्मिकता का पर्दा डाल रखा है उसी से कुछ लोग उनकी तरफ आकर्षित हुए हैं, नहीं तो अंग्रेजी शासन के प्रति किसी को शिकायत नहीं है । मेरी तो ऐसी ही धारणा है ।

गुलाम मुहम्मद—और अभी मस्जिद में से 'या ! अली' के नारे लगने दीजिए । ये लोग ऐसे भागेंगे मानो ऊपर आसमान से बिजली गिर रही है । मानो नीचे से जलजला आ रहा है ।

(पास ही से गाने की आवाज आती है ।)

हम आजादी के परवाने ।

हमने देखा है उजियाला,
अपनी ओर बुलाने वाला,
देखा उसका हुस्न निराला,

चले आग को गले लगाने ।

हम आजादी के परवाने ॥

आवें हमें मिटाने वाले,
हम पर तोप चलाने वाले,
हम हैं जान लुटाने वाले,

मर, मरकर जी जाने वाले ।

हम आजादी के परवाने ॥

कर्नल होम्स—यह तो एक नया ही जुलूस-सा जान पड़ता । सभी तुर्की टोपी पहने हैं । वह देखो न हाजी साहब, आपकी मस्जिद में से टिड्डियों के भुण्ड की तरह निकल रहे हैं । उनके हाथ में भी तिरङ्गा झंडा है ।

गुलाम मुहम्मद—मैं खुद हैरान हूँ, कर्नल साहब ! ये तो मेरे अपने आदमी हैं । किसी ने इन्हें वहकाया है । हम मुसलमानों में भी दगाबाजों की कमी नहीं है । लेकिन, कोई फिक्र नहीं मैं उन्हें रास्ते पर लाता हूँ ।

[प्रस्थान]

कर्नल होम्स—रास्ते पर लाता हूँ ? मैं सब समझता हूँ हाजी साहब ! तुम सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हो । मुझे ही धोका देते हो ! और राय साहब आपके आदमी....

सीताराम—जी, वे अभी तक आए ही नहीं !

कर्नल होम्स—आए ही नहीं ! तो आपने खाक किया है ? वैसे

ही आप रायबहादुर बन जाना चाहते हैं । आपका लोगों पर असर ही क्या है ?

सीताराम—उन्हें किसी ने बहका दिया है ।

[कुछ सिपाही मशीनगन लेकर आते हैं और उसे सड़क के बीच में खड़ी कर देते हैं ।]

कर्नल होम्स—तो फिर यह मशीनगन ही इन आजादी के दीवानों को होश में लायगी । आप लोग किसी काम न आ सके । इन लोगों को गुस्ताखी की सजा अपने आप मिल जाती और...

सीताराम—और सरकार बदनामी से बच जाती !

कर्नल होम्स—आप भी छीटा कसते हैं, रायसाहब ! हमें सरकारी हुक्म की इज्जत रखना लाजिम है । अङ्गरेजी राज्य की शान को हम जरा भी नहीं भुक्ने देना चाहते । सरकारी कानून को तोड़ने की जुर्रत । इसे अगर गवारा किया गया तो जल्दी ही हम लोगों को बोरिया-बदना बांधकर इंग्लैण्ड का रास्ता नापना पड़ेगा ।

[सड़क की दूसरी तरफ से आवाज आती है—‘हिन्दुस्तान जिंदाबाद, हिन्दुस्तान हो आजाद, महात्मा गांधी की जय ।’]

कर्नल होम्स—लो यह जुलूस आ गया है । (एक सिपाही से) तुम जाओ और जुलूस के नेता को समझाओ कि अङ्गरेजी सरकार का हुक्म तोड़ना वच्चों का खेल नहीं है । यह सड़क पर जो मशीनगन है वह महज धमकी नहीं है । यह सड़क पर आग उगलने लगेगी । आप लोग अपनी जिम्मेदारी को समझें । बेगुनाह लोगों के खून से इस सड़क की गिट्टियों को तर न करें ।

[सिपाही का प्रस्थान और गुलाम मुहम्मद का प्रवेश]

गुलाम मुहम्मद—ग़ज़ब हो गया, सरकार । ‘इस घर में आग लग गई घर के चिराग से ।’ आपकी साहबज़ादी, राय साहब के

साहबजादे और मेरे छोकरे ने हमारे खिलाफ बगावत की है ! हमने जो किले बनाये थे वे मिट्टी में मिल गए। हमारे सभी आदमियों को उन्होंने बहकाकर कांग्रेस के जुलूस में शामिल कर लिया है। ये तीनों जुलूस में सबसे आगे हैं। अब आप फायर भी कैसे करायेंगे ?

कर्नल होम्स — अङ्गरेज ड्यूटी पर यह नहीं देखता कि उनका बार किस पर हो रहा है। उस वक्त न कोई उसका बाप है, न भाई न बेटा, न बेटी। वह आँखें बन्द करके काम किये जाता है।

गुलाम मुहम्मद — फिर भी उन्हें समझाने की कोशिश तो करनी चाहिए।

कर्नल होम्स — जरूर, तुम उन्हें बुलाकर लाओ।

[कलक्टर का प्रवेश, कर्नल तथा सिपाही सेल्यूट देते हैं।]

सीताराम — आज जैसे मेरी आँखों पर से परदा हट रहा है।

कलक्टर — मिस्टर होम्स क्या हाल है ?

कर्नल होम्स — आप देख रहे हैं। मेरी लड़की ने भी बगावत का भगड़ा उठाया है।

[गुलाम मुहम्मद का मिस होम्स, वली मुहम्मद और मनोहरलाल के साथ प्रवेश]

सीताराम — कैसा सुन्दर दृश्य है ! इन तीनों के चेहरे पर कितना तेज है।

जिस देश में मिस होम्स सी पुत्री और वली मुहम्मद और मनोहर जैसे पुत्र हों वह गुलाम कैसे रह सकता है ?

कर्नल होम्स — मैं और कलक्टर साहब भी आप तीनों बहादुरों से बहुत खुश हैं और आपसे इस्तदुआ करते हैं कि आप लोग पब्लिक को समझायें कि वे जुलूस बन्द करके घर लौट जायें।

मिस होम्स — हमें क्या करना चाहिए यह हम खूब जानते हैं।

मनोहर — हम महात्मा गांधी की इज्जत सरकारी हुकम से ज्यादा करते हैं और उस इज्जत को रखने के लिए अपने प्राणों की कीमत देने को तैयार हैं।

वली मुहम्मद—हम अपने खून से समुद्र में जुलम की सल्तनत को डुबा देगे ।

कलक्टर—मिस होम्स, मेरी बात भी आप नहीं मानेंगी ।

मिस होम्स—मैं आपको इस वक्त नहीं जानने को मजबूर हूँ ।

कर्नल होम्स—बेटी !

मिस होम्स—नहीं, कर्नल होम्स ! इस वक्त आप मेरे फादर नहीं है ।

आप सरकारी मशीन के पुर्जे हैं । मैं इस अभागे देश की एक पुत्री हूँ । इस देश में मैं पैदा हुई हूँ । इसका नमक मैंने खाया है, इसके लिये मेरा जो फर्ज है वह मैं अदा कर रही हूँ । मैं इस राष्ट्र का अङ्ग हूँ । इसके मुख-दुःख मेरे मुख-दुःख हैं । इसकी जिदगी मौत मेरी जिदगी मौत है ।

कलक्टर—इंग्लैण्ड तुम्हारा मुल्क नहीं, हिन्दुस्तान तुम्हारा राष्ट्र है ! यह तुम क्या कहती हो मिस होम्स ?

मिस होम्स—यह बात आप लोगों से नये सिरे से कहने की जरूरत नहीं । अमेरिका की स्वतन्त्रता के युद्ध में अंग्रेजों ने अंग्रेजों के ही खिलाफ हथियार उठाकर अमेरिका को इंग्लैण्ड की गुलामी से आजाद किया था । देश और राष्ट्र किसे कहते हैं यह अंग्रेज कौम खूब जानती है । दुनिया का इतिहास क्या कहता है ? हिन्दुस्तान का ही पुराना इतिहास देखिए जिस तरह बाबर, अहमदशाह अब्दाली, चंगेजखां, नादिरशाह बगैरा को हिन्दुस्तान पर हमला करते वक्त यहाँ के मुसलमानों का मुकाबला सहना पड़ा था, उसी तरह आपको भी मिस होम्स की बगावत का मुकाबला करना पड़ेगा । इसके अलावा इन्सानियत का भी तकाजा है कि हम इन्साफ करना सीखें ।

कर्नल होम्स—मैं इन बातों पर सोचने की जरूरत नहीं समझता । मेरा हुक्म है कि जुलूस को बन्द कर दो, नहीं तो मशीनगन अपना काम करेंगी ।

मिस होम्स—उसका मुँह किसने बन्द किया है, कर्नल होम्स ! (मशीन-गन के आगे खड़ी हो जाती है । उसके पीछे वली मुहम्मद, और उसके पीछे मनोहरलाल खड़ा होता है ।) लेकिन उसका पहला निशान मुझ पर, दूसरा वली मुहम्मद पर, तीसरा मनोहर पर, उसके बाद भी अगर अंग्रेज हुक्मत की खून की प्यास न बुझे तो बाकी भीड़ पर गोलियाँ दागिए । आज माँ के तीन लाड़ले बच्चे एक राष्ट्र-मन्दिर की नींव डालेंगे । अपनी हड्डियों और खून से माँ का यह मन्दिर बनायेंगे ।

कर्नल होम्स—अच्छा तो फायदा . . .

कलक्टर—ठहरो ! जरा-सी बात के लिए इतना सख्त कदम उठाने की जरूरत नहीं । कर्नल होम्स, अभी जुलूम निकलने दो, बाद में बागियों से कानून भुगत लेगा । ले जाओ मशीनगन !

[सिपाही मशीनगन हटा ले जाते हैं । 'इन्कलाब जिंदाबाद' के नारे से आसमान गूँज उठता है । 'महात्मा गांधी की जय' के नारे लगते हैं । गाते हुये जुलूस गुजर रहा है ।]

गान

हिन्दुस्तान सुखों के धाम ।
तुमको सौ-सौ बार प्रणाम !
तुमको सौ-सौ बार सलाम !

मुस्लिम, आर्य, बौद्ध, ईसाई,
जैन, पारसी, सिख, सब भाई,
तुम पर सब भाई सौदाई,

तुम सबकी जननी अभिराम !
हिन्दुस्तान सुखों के धाम !

गङ्गा में है गान तुम्हारा,
हिमगिरि पर उत्थान तुम्हारा,
पद धोता है सागर खारा,

चढ़ा पदों पर रत्न ललाम !

हिन्दुस्तान, सुखों के धाम !

अन्तर कितना वैभवशाली,
बाहर भी कितनी हरियाली,
कोने-कोने में खुशहाली,

तुम पर निर्भर जग के काम !

हिन्दुस्तान, सुखों के धाम !

कुछ सदियों हम पथ भूल,
और लुटेरे आकर फूले,
लेकर विभव तुम्हारा भूले,

हम कहलाने लगे गुलाम !

हिन्दुस्तान, सुखों के धाम !

माँ, सन्तान तुम्हारी सारे,
शीश कटाने का व्रत धारे,
बढ़ते, हमको प्राण न प्यारे,

मृत्ति बिना कैसे विश्राम ?

हिन्दुस्तान, सुखों के धाम !

तुमको सौ-सौ बार प्रणाम

तुमको सौ-सौ बार सलाम !

पटाक्षेप

समस्या का अन्त
— उदयशंकर भट्ट

श्री उदयशंकर भट्ट—हिन्दी के प्रसिद्ध कवि, नाटककार और उपन्यास लेखक हैं। भारत विभाजन के पूर्व आप लाहौर में अध्यापन का कार्य करते थे और अब आल इण्डिया रेडियो के हिन्दी विभाग में काम करते हैं। आपने १९२८ से नाटक लिखना आरम्भ किया। जीवन के विभिन्न पहलू को छानबीन कर देखने की प्रवृत्ति आपके नाटकों में अधिक पाई जाती है। आप नाटका को केवल दिल बहलाव का साधन मात्र ही नहीं मानते, वास्तविक जीवन-दर्शन प्रस्तुत करने का माध्यम भी मानते हैं। पात्रानुरूप भाषा लिखने में आपने अच्छी सफलता प्राप्त की है। आपके एकांकिया में मनोभाव सरलता से स्पष्ट हो जाते हैं।

प्रस्तुत नाटक में दो गण राजा का चित्र उपस्थित किया गया है। एक मद्रक और दूसरा वामन्य। एक दूसरे के शत्रु हैं। इस एकांकी की मुख्य नायिका माणविका ने आत्मबलि देकर दोनों के बीच मैत्री को जन्म दिया। “प्रेम और युद्ध-प्राप्त-जावन की ओर नाटक की गति है।”

नाटक के पात्र

माणविका—

श्रुतबुद्धि—

शबर—

दर्भक—

वामरथ गण की कन्या ।

मद्रक गण का सेनानायक ।

माणविका का पिता ।

माणविका का भाई ।

मधुमती, आनन्दक, सागरिका आदि ।

पहला दृश्य

[रात्रि का समय । आकाश में कभी-कभी चाँद मुस्करा उठता है, शेष समय बादल के टुकड़े उठ-उठकर चन्द्रमा को घेर लेते हैं, मानो प्रमत्तता के अन्दर कभी-कभी विपाद की रेखा खिंच जाती हो । एक नव-युवती-जिसमें सत्रह-अठारह वर्षों ने अपनी संचित शक्ति भर डाली है । उठान के साथ सौन्दर्य, सौंदर्य के साथ बल, बल के साथ गठन, गठन के साथ दृढ़ता, आत्म-विश्वास, गर्व और अभिलाषा के कुछ स्फुल्लिंग । गौर वर्ण, जटाजूट वेणी जिनसे ललाट और भी विशाल दिखाई देता है । वेणी-जटा में चारों ओर मालती के पुष्प हैं । आघाताक्ष, तीखी नाक और स्तनांशुक तथा कोपेय शाटिका । सुदृढ़ शरीर, साथ में सिंह-शावक जो लोहशृङ्खला से बंधा हुआ है । स्थान नदी का तट । सिंह-शावक पानी पी रहा है । युवती, जिसका नाम माणविका है, नदी की धार की ओर ध्यान से देख रही है । कभी 'अरे पी चुका' कह कर सिंह-शावक को भटका देती है । फिर ध्यान से नदी की धार की ओर देखने लगती है । ऐसा दीख पड़ता है मानो दूर से कोई व्यक्ति नदी की धार को चीरता हुआ चला आ रहा है । माणविका दखकर कहती है -]

कौन आ रहा है ? इस भयंकर तूफान में नदी को चीरता हुआ वह कौन आ रहा है ? अरे, क्या वही है ?

(व्यक्ति पास आ जाता है । सिंह एक बार फिर गरजता है । व्यक्ति के फूले हुए साँसों की आवाज बढ़ती है ।)

माणविका—(पास से) तुम, तुम आ गए ? इतनी बढ़ी हुई नदी को, अंधेरी रात में पार करके आज तुम फिर आ गए श्रुतबुद्धि ? श्रुतबुद्धि—हाँ, माणविका ! मैं आ गया । यह तो नदी है, तुम्हारे लिए

मैं समुद्र पार कर सकता हूँ। आकाश के तारे तोड़ कर ला सकता हूँ।

माणविका—श्रुतबुद्धि ! जानते हो तुम्हारे इस साहसपूर्ण कार्य का क्या अर्थ होगा ?

श्रुतबुद्धि—मेरा नाश ?

माणविका—तुम्हारा ही नहीं, मेरा भी। तुम्हारे यहाँ आने के कारण सहस्रों वामरथों मद्रकों का नाश हो जायगा। मेरे गण के लोग यह नहीं चाहते कि एक भी वामरथ मद्रकों से मिले।

श्रुतबुद्धि—(नदी पार करने की थकावट से साँस अभी तक फूल रही है।) मैं जानता हूँ माणविका, मैं तुमसे मिलने आकर आग से खेल रहा हूँ। मृत्यु को हथेली पर रख कर ही मैं यहाँ आता हूँ माणविका !

माणविका—किन्तु तुम्हारे घाव तो अभी तक भरे नहीं हैं। नदी में प्रतिदिन इस प्रकार संतरण करने से क्या वे फट न जायेंगे ? उनमें विपाक न पड़ जायगा ?

श्रुतबुद्धि—नहीं, अब वे कुछ कुछ ठीक हैं। उससे भी बढ़कर मेरे हृदय में एक घाव हो गया है माणविका !

माणविका—हैं ? हृदय में घाव ? किसी वैद्यको दिखाओ। (सिंह गरजता है।) अरे, तुम्हें क्या हो गया ? तू किधर भाग रहा है ? ठहर जा। श्रुतबुद्धि ! तुम्हारी भेंट यह सिंह भी मेरे श्रीडनक से कम नहीं है। दो-एक दिन तो इसने मुझे व्यर्थ ही दौड़ाया। किन्तु अब यह मेरा आज्ञाकारी हो गया है। देखो, तनिक इसके सिर पर हाथ फेरो, कितना सुन्दर है ! यह तुम्हारे हृदय में घाव कैसे हो गया, भला ? किसी और सिंह से युद्ध किया था क्या ?

श्रुतबुद्धि—नहीं, एक सिंहनी से युद्ध करना पड़ा।

माणविका—(भोलेपन से) सिंहनी से ? सिंह की अपेक्षा सिंहनी से युद्ध करना कठिन है। किस स्थान पर तुमने युद्ध किया था ? यहाँ

वामरथों के वन में अथवा मद्रक वन में ।

श्रुतबुद्धि—वामरथ वन में ।

माणविका—वामरथ वन में ? कहाँ ?

श्रुतबुद्धि—लम्बी कथा है माणविका, तुम न समझ सकोगी ।

माणविका—यदि तुम समझाओगे तो क्यों न समझ सकूँगी । यह हृदय में घाव कैसे हो गया है ? तुम्हें मालूम है मेरे परिवार को सन्देह हो गया है । पहले मैं क्षेत्र-रक्षा के लिए रात्रिभर नहीं रहती थी, अब मैंने तुमसे मिलने के लिए रात्रिभर क्षेत्र-रक्षा का भार लिया है । इसी से मेरी माता को सन्देह हो गया है श्रुतबुद्धि !

श्रुतबुद्धि—फिर ?

माणविका—हम लोग दो-एक दिन में गान्धार जाने वाले हैं । मेरी माता गान्धार देश की है न ? गान्धार में मेरी माता को दो बड़े अन्न-क्षेत्र मिले हैं, इसीलिए ।

श्रुतबुद्धि—मुझे वामरथों से कोई डर नहीं है माणविका ! जीवन दो बार नहीं मिलता । प्रेम दो व्यक्तियों से नहीं किया जाता । क्या तुम मुझे छोड़कर चली जाओगी माणविका ?

माणविका—जाना ही होगा श्रुतबुद्धि ! तुमने हृदय के घाव के सम्बन्ध में नहीं बताया ।

श्रुतबुद्धि—व्यर्थ है ।

माणविका—व्यर्थ क्यों है, क्या तुम माणविका को...

श्रुतबुद्धि—मुझे बड़ा धोखा हुआ । विश्वास के पंखों पर उड़कर जो मैंने पाया था, आज वह नदी की लहरों में बहा जा रहा है । जीवन इतना क्षणिक है, विश्वास इतना पंगु है, प्रेम इतना कमजोर है, हृदय इतना दुर्बल है, यह मैंने आज ही जाना ।

माणविका—तुम इतने दुखी क्यों होते हो ? मैं गान्धार से फिर लौट आऊँगी ।

श्रुतबुद्धि—वर्षों प्रतीक्षा करने वाला हृदय क्षणभर भी विश्वास नहीं करता माणविका ! तुम क्या इसी तरह लौट सकोगी ? उतना ही सबल प्रेम लेकर ? विश्वास नहीं होता । अच्छा चलो । लहरें मेरी प्रतीक्षा कर रही हैं । बिजलियाँ कड़ककर मेरी कमजोरी को देख रही हैं ।

माणविका—मैं नहीं समझती तुम क्या कह रहे हो ?

श्रुतबुद्धि—सिंहों से युद्ध करने वाली युवती हृदय से युद्ध नहीं कर सकती ।

माणविका—तुम जानते हो ? इस आधी रात को न जाने कौन मुझे इस नदी तट पर खींच ले आता है । न जाने क्यों तुम्हारी मूर्ति मेरी आँखों में झूलती रहती है ?

श्रुतबुद्धि—फिर भी तुम मेरे हृदय के घाव की, गहराई को नहीं समझ पाती माणविका !

माणविका—(लम्बी आह भर कर) मैं समझती हूँ श्रुतबुद्धि ! अब समझी । तुम न जाने कौन सी भाषा में बात करते हो ? तुम बात करने में बड़े चतुर हो । क्या सभी मद्रक इसी प्रकार बहुत बातें करना जानते हैं ?

श्रुतबुद्धि—(चुप रहकर कुछ सोचता हुआ) मैं नहीं चाहता कि तुम गान्धार जाओ ।

माणविका—मैं विवश हूँ । माता-पिता जा रहे हैं । मुझे जाना ही होगा श्रुतबुद्धि ।

(इसी समय माँ की आवाज आती है 'माणविका, माणविका, ओ माणविका ! अरी कहाँ है तू' ?)

माणविका—यहाँ नदी-तट पर सिंह-शावक को जल पिलाने आई थी । आ रही हूँ । (सिंह गरजता है) (धीरे से) तुम जाओ श्रुतबुद्धि ! माता आ रही हैं, जाओ ।

श्रुतबुद्धि—मैं नहीं जा सकता माणविका ! इतनी दूर आकर लौट

सकना असंभव है। बोलो, तुम गान्धार नहीं जाओगी।

माणविका—मैं, मैं कुछ नहीं कह सकती श्रुतबुद्धि ! तुम जाओ।

(नेपथ्य से 'माणविका !' आवाज पास आ जाती है)

मां—मैं आ रही हूँ, देख बादल घिरे आ रहे हैं। बिजली कड़क रही है।

और तू नदी के किनारे अकेली है।

माणविका—अभी आ रही हूँ। माँ, आ रही हूँ। यह सिंह नहीं आना चाहता। (गरजता है) देख बिजली की कड़क बादलों की गरज से यह कितना प्रसन्न होता है। (सिंह फिर गरजता है) तुम जाओ श्रुतबुद्धि, जाओ ! माँ आ रही हैं।

श्रुतबुद्धि—तुम वचन दो।

माणविका—हम लोग कल रात्रि को यहीं मिलेंगे, जाओ !

माँ—देख, अन्न को पशु चरे जा रहे हैं और तू नदी के तट पर बिजली की कड़क, मेघों की गरज, नदी की बाढ़ देख रही है। कौन है तेरे पास ?

(श्रुतबुद्धि एकदम नदी की धार में कूद पड़ता है। मां का प्रवेश)

माणविका—कोई भी तो नहीं माँ ! कोई भी नहीं।

मां—तू बोल रही थी न ?

माणविका—कोई भी न था। एक, नक्र को देखकर मदनक गरज रहा था।

मां—आज मद्रकों ने हमारे दो वामरथों को मार डाला, तूने सुना।

माणविका—क्यों ?

मां—यह तो मुझे नहीं मालूम। कोई बात होगी कोई कहता है कि वामरथ मद्रकों के प्रदेश में घुस रहे थे। कोई कहता है मद्रक उन्हें पकड़ कर ले गए।

माणविका—बड़े दुष्ट हैं मद्रक। नदी के उस पार ही तो मद्रकों का देश है।

माँ—आओ चलें। मद्रकों के कारण यह तट भी असुरक्षित होता जा

रहा है । आओ चलें । तुम्हें अकेली समुद्र-तट पर डर नहीं लगता री ?

माणविका--डर किस बात का माँ ! मदनक जो मेरे साथ है ।

माँ--मदकों का ! हम लोग शीघ्र ही गान्धार चले जायेंगे ।

माणविका--क्या मदकों से भय के कारण ही ?

माँ--यह प्रतिदिन का युद्ध मुझे अच्छा नहीं लगता । चल अन्न पड़ा है, पशु न खाय । तू किससे बात कर रही थी ?

माणविका--(मदनक से) चलो (सिंह गरजता है) ।

द्वितीय दृश्य

[अन्न-क्षेत्र से हरे-भरे वन में बलिष्ठ-शरीर नवयुवक श्रुतबुद्धि घूम रहा है । घनाच्छादित आकाश में कभी चन्द्रोदय हो जाता है । कभी श्रुतबुद्धि घूमता दिखाई देता है । घुटनों तक धोती, शेष शरीर मृग-चर्म के कंचुक से ढका हुआ । कमर में कृन्त । सिर के बाल पीछे की तरफ बिखरे हुए । अन्धकार में श्रुतबुद्धि घूम रहा है । क्षेत्रों में मंच दिखाई देते हैं । एक के मंच के पास जाकर 'माणविका, माणविका' धीरे-धीरे आवाज लगाता है ।]

श्रुतबुद्धि--(धीरे से) यह मंच पर कौन बैठा है, निश्चय ही यह माणविका है । माणविका ! प्रिय माणविका !

एक व्यक्ति--कौन है, कौन है ? (आगे बढ़कर) तुम कौन हो ?

श्रुतबुद्धि--श्रुतबुद्धि ।

शबर--दर्भक, देखो, मुझे स्पष्ट नहीं दिखाई दे रहा है । देखो तो तनिक ।

दर्भक--देखता हूँ दादा, (आगे बढ़कर श्रुतिबुद्धि को पकड़कर) बोलो तुम कौन हो ?

श्रुतबुद्धि--छोड़ो, मुझे जाने दो । (छुड़ाता है, दर्भक पकड़ लेता है ।)

दर्भक--अब तुम नहीं जा सकते, तस्कर ।

शबर--कौन है दर्भक ? क्या यह ग्रन्थ चुराने आया था ?

श्रुतबुद्धि--माणविका को मैंने मदनक भेंट में दिया था, उसे लेने को आया है ।

शबर- क्या कहा, माणविका को इसने मदनक भेंट में दिया था ?

दर्भक--यही कहता है । (सामने जाकर) माणविका से तुम्हारा सम्बन्ध ?

श्रुतबुद्धि--सम्बन्ध--क्या माणविका नहीं है ?

दर्भक- तुमने मदनक उसे क्यों दिया था ? नहीं, तुम तस्कर हो ।

शबर--पकड़ लो दर्भक, पकड़ लो । यह कोई तस्कर है ।

दर्भक--मदनक तुमने भेंट में दिया था ? तुम हो कौन ?

श्रुतबुद्धि--मैं मद्रक हूँ, श्रुतबुद्धि मेरा नाम है ।

दोनों--मद्रक, दुष्ट मद्रक, अब तुम बचकर नहीं जा सकते ।

(दोनों में युद्ध होता है, शबर दर्भक दोनों मिलकर श्रुतबुद्धि को मारते हैं, श्रुतबुद्धि 'अःह' करके गिर जाता है ।)

शबर--मर गया ।

दर्भक--हाँ, मर गया ।

शबर--साँस तो नहीं है ?

दर्भक--नहीं अब यह उठ नहीं सकता । मद्रकगण के किसी व्यक्ति को देखकर उसे सुरक्षित जाने देना वामरथों का धर्म नहीं है । चलो चलें ।

शबर--हाँ, ठीक है । चलो ।

(माणविका का प्रवेश)

माणविका--(उसी अन्धकार में) अभी तक श्रुतबुद्धि नहीं आया । क्या वस्तुतः वह अब न आयगा ? हैं, यह क्या ? यह कौन है ? (पास जाकर) अरे श्रुतबुद्धि ! यह तुम्हारी दशा किसने की ? श्रुतबुद्धि ! अभी साँस तो चल रही है । ठहरो, मैं जल डालती हूँ । श्रुतबुद्धि ! नेत्र खोलो, देखो, मैं माणविका हूँ ।

श्रुतबुद्धि- (धीरे से) माणविका !

माणविका--तुम्हारी यह दशा किसने की श्रुतबुद्धि !

श्रुतबुद्धि—(चुप रहता है)

माणविका—बोलो प्रिय, तुम्हें क्या हुआ ?

श्रुतबुद्धि—माणविका, तुम्हारे पिता शबर और भाई दर्भक ने मिलकर मुझे मार ही डाला था ।

माणविका—तुम क्षेत्र में गये थे ?

श्रुतबुद्धि—हाँ, तुम्हें खोजता अन्न क्षेत्र में गया था । अब मैं स्वस्थ हूँ ।

माणविका—प्रिय ! कल अन्न घर चला जायगा । इसके पश्चात् हमारा क्षेत्र का कार्य समाप्त हो जायगा । परसों हम लोग गान्धार जा रहे हैं ।

श्रुतबुद्धि—फिर तुमने मुझे क्यों जीवित किया ? माणविका, मुझे यहीं नदी के तट पर मर जाने देतीं ।

माणविका—प्रिय !

श्रुतबुद्धि—माणविका !

माणविका—मैं चुपचाप माता को सोती छोड़कर अन्तिम बार तुम से मिलने आई हूँ । कल कुछ मद्रकों ने दो वामरथों को मार डाला । मैं मद्रकों से घृणा करती हूँ । तुमसे भी मिलना नहीं चाहती थी, किन्तु समय आते ही न जाने क्यों मुझसे रहा न गया । मैं सोई न रह सकी । दौड़ी हुई तुमसे मिलने चली आई ।

श्रुतबुद्धि—मैं तुम्हारे बिना जीवित न रह सकूँगा । तुम्हें मेरे साथ चलना होगा ।

माणविका—शत्रु मद्रकों के घर मैं नहीं जा सकती ।

श्रुतबुद्धि—हमारा प्रेम मद्रक वामरथों से ऊपर है, माणविका ! मैं वचन देता हूँ कि जीवन रहते तुम्हारी रक्षा करूँगा । तुम प्राण हो मैं शरीर, तुम हृदय हो मैं स्पन्दन, तुम वाणी हो मैं जिह्वा, माणविका !

माणविका—प्रिय हम तुम एक होकर रह सकेंगे ?

श्रुतबुद्धि—अवश्य, हमें संसार की कोई शक्ति पृथक् नहीं कर सकती ।

माणविका—नारी एक बार हृदय देती है ।

श्रुतबुद्धि—मद्रक एक ही नारी को प्यार करते हैं ।

तृतीय दृश्य

[सुरा-पान करते हुए मद्रकगण नाच रहे हैं ।]

छलक-छलक चले ।

सुरा भरे मधुर-मधुर चषक ढलक चले ।

रंग-रंग रूप-रूप में ढले-छलक-छलक चले ।

सुरा भरे मधुर-मधुर चषक ढलक चले ।

प्रेम नेत्र-द्वार से ललक-ललक चले ।

छलक-छलक चले ।

गीत गा रही निशा सितार-तार पर

होश भी उलझ रहे नेत्र-द्वार पर

मदिर-मदिर सगंध पी प्राण थक चले ।

छलक-छलक चले ।

महान गान आज यह समीर-ताल पर

धूमते सुरा चषक अमन्द चाल पर

प्राण-प्राण गान कर ललक-ललक चले ।

छलक-छलक चले ।

सुरा भरे मधुर-मधुर चषक ढलक चले ।

सब—एक बार और मिलकर पियो ! श्रुतबुद्धि माणविका के दीर्घ जीवन के लिये पियो !

प्रथमक—हमारे जीवन पर संसार का जीवन निर्भर है, अतः अपने लिए पियो ! अपने नेत्र बन्द कर लेने पर संसार में अन्धकार छा जाता है और यह सुरा स्वर्ग-गमन के लिए सोपान है । अतः

अपने लिये पियो ! एक बार पियो, अनेक बार पियो !
हा हा हा..... (पीता है) ।

मधुमती—प्रथमक, पीकर तुम भूल जाते हो कि कोई और भी है । इस मद्रकों में अपना तो कोई है ही नहीं । इसलिए मैं कहती हूँ सब के लिए पियो, सब के सुख के लिये पीयो ! माणविका के लिये पियो, श्रुतबुद्धि के लिये पीयो ! लो माणविका (चषक देती है)

आनन्दक—प्रमाद है, जीवन प्रमाद है । मैं कहता हूँ कि इतना पियो कि जिससे अपने को, पराये को भूल जाओ । यही ब्रह्मानन्द है । युद्ध मे जिस प्रकार जीवन का मोह नहीं होता, वैराग्य में जिस प्रकार मरण से घृणा, भय नहीं होते, इसी प्रकार मरण जीवन के बन्धन की उपेक्षा करके पियो ! लो तुम पियो मधु-मती, तुम्हारा नाम मधुमयी है । प्रिय, स्वयं सुरामयी हो तुम !

श्रुतबुद्धि—माणविका मद्रकों की विजय-श्री है । प्रिये, सब मद्रक तुम्हारा स्वागत करते हैं, लो एक मेरे हाथ से प्रिये !

माणविका—प्रिय, प्रेम भेद नहीं जानता । उसकी दृष्टि में न मद्रक हैं न वामरथ । वह सबके लिए पेय है ।

(मद की विह्वलता से सब की आँखें विभोर हो उठती हैं । कुछ स्वयं उठकर नाचने लगते हैं । हा-हा-हू-हू से स्थल भर जाता है)

सागरिका—माणविका, सुरा जीवन के बसन्त का अग्रदूत है । आह तुम इस समय कितनी सुन्दर लग रही हो ! (हँसती है)

माणविका—ठीक कहती हो सागरिका, तुम्हारे लाली भरे कपोल भी तो कितने सुन्दर रहे हैं ।

सब—ठीक, सुन्दर (हा-हा हँसते हैं)

सब—हा-हा एक बार नहीं, अनेक बार । मद्रकगण की जय !

गूँज उठे आकाश हमारा गूँज उठे,

गूँज उठे माधुमास दुलारा गूँज उठे !

(हँसते हैं)

दीर्घक—बस करो, बस करो । तुमने सुना वामरथ मद्रकों पर आक्रमण करके माणविका के अपहरण का बदला लेना चाहते हैं ।
उत्सव बन्द करके युद्ध की तैयारी करो ।

सब— माणविका मद्रकवर्ग की हो गई । हम उसकी रक्षा के लिए प्राण दे देंगे, चलो ।

माणविका—प्रियतम श्रुतबुद्धि !

श्रुतबुद्धि—प्रिय !

माणविका—तुमने सुना ?

श्रुतबुद्धि—मद्रक युद्ध से कभी नहीं डरते, माणविका ! हम लोग प्राण रहते तुम्हारी रक्षा करेंगे ।

माणविका—है !

श्रुतबुद्धि—चलो, प्रातःकाल ऊषा की लालिमा के साथ शाकल नदी को वामरथों के रक्त से रंग देने के लिए चलो ।

सब—हाँ, चलो ।

माणविका—श्रुतबुद्धि वामरथ मेरे बन्धु हैं, यह नहीं होगा ।

श्रुतबुद्धि—फिर क्या होगा । युद्ध का आह्वान होने पर हम पीछे नहीं हट सकते ।

माणविका—क्या युद्ध आवश्यक है श्रुतबुद्धि ?

श्रुतबुद्धि—प्रिये, हमारा जीवन गण के लिए है । मद्रकगण के सेना-नायक होने के नाते मेरा कर्तव्य हो जाता है कि मैं युद्ध के लिए अपने गण को सन्नद्ध करूँ ।

माणविका—(दीर्घ साँस लेकर चुप रह जाती है)

श्रुतबुद्धि—आज्ञा दो प्रिये, बाहर कोलाहल बढ़ रहा है । सम्पूर्ण वर्ग मेरी प्रतीक्षा में है ।

माणविका—मैं कुछ नहीं जानती ।

श्रुतबुद्धि—तुम्हारे मुख-चन्द्र को फिर देखने का विश्वास लेकर जा रहा हूँ प्रिये ! (चला जाता है)

सागरिका -- माणविका ! तुम उदास हो गईं । हम मद्रक स्त्रियाँ, ओह यह युद्ध कितना भयानक है !

माणविका -- सखी ! मैं भी युद्ध के लिए जाऊँगी ।

सागरिका -- युद्ध के लिए जाना अनुचित नहीं, किंतु क्या तुम अपने भाई बन्धु वामरथों से युद्ध कर सकोगी ।

माणविका -- यही सोचती हूँ, किन्तु मुझे जाना ही होगा । मैं ठहर नहीं सकती ।

सागरिका -- कहाँ यह विलास और कहाँ मृत्यु ! कितना अन्तर है इसमें ?

माणविका -- तुम सच कहती हो सखी ! प्रेम बलिदान चाहता है ।

सागरिका -- ऐं ! तो क्या तुम अपना बलिदान दोगी ? क्या यह युद्ध किसी प्रकार रुक नहीं सकता ?

माणविका -- तुमने सिंह की दाढ़ों से छीनकर मृग का मांस खाया है सागरिका ?

सागरिका -- नहीं । पर इस समय इन बातों से क्या मतलब है तुम्हारा ?

माणविका -- तुमने बरसाती नदी की वेगमयी धार में तैरते हुए नृत्य किया है सागरिका ?

सागरिका -- नहीं ।

माणविका -- मुझे एक चषक सोम दो ।

सागरिका -- लो, पियो । प्रियतम के पुनरागमन के लिए कादम्ब-पान करो सखी ।

(गट-पट पीती है)

माणविका -- एक और !

सागरिका -- लो ।

माणविका -- एक चषक और दो !

सागरिका -- बस, अब मत पियो । पहले भी तुमने अधिक पिया है । यह इक्षु-सुरा तुम्हारे रक्षा-रस से अधिक उग्र होती है, माणविका !

माणविका -- दो, मुझे पीने से मत रोको । मैं आज सारा कादम्ब पी जाना चाहती हूँ । रोको मत सखी, और दो !

सागरिका—नहीं, अब मत पियो । अरे तुम कैसी हो रही हो ? जैसे तुमने अपने को भुला दिया है । हैं हैं, अरे गिरी जा रही हो । ठहरो, तुम्हें पर्यङ्क पर लिटा देती हूँ, चलो ।
 माणविका—मेरे प्राण आसव बनकर विश्व को विभोर कर दें ।
 सागरिका—हमारा गण विजयी होकर लौटे !

चतुर्थ दृश्य

['वामरथों की जय' 'मद्रकों की जय' के नारे लगते हैं]
 वामरथों में से—यदि अपना कल्याण चाहते हो तो माणविका को लौटा दो ।
 मद्रकों में से—यह नहीं हो सकता । माणविका परिणीता वधू है, वह लौट नहीं सकती ।
 वामरथों में से—तो मरने के लिए तैयार हो जाओ । हम एक-एक मद्रक का नाश कर देंगे ।
 मद्रकों में से—बहुत बातें मत करो । युद्ध में ही बल की परीक्षा होती है । आओ युद्ध करो ।
 वामरथ—वामरथ गण की जय !
 मद्रक—मद्रक गण की जय !
 वामरथ—मरने के लिए तैयार हो जाओ ।
 मद्रक—तुम भी आओ और युद्ध करो ।
 (परशु, भाले, कृपाण खनखना उठते हैं, इसी समय)
 वामरथ—कौन माणविका ! वामरथ की जय !
 मद्रक—माणविका तुम जाओ । मद्रक गण की जय !
 माणविका—मैं वामरथों की पुत्री और मद्रकों की वधू हूँ । मैं चाहती हूँ युद्ध बन्द हो ।

वामरथ—मद्रकों ने हमारा अपमान किया है। माणविका को उठाकर
ले चलो।

मद्रक—वामरथों ने हमारे ऊपर आक्रमण किया है, इसलिए हम उन्हें
दण्ड देंगे।

माणविका—क्या युद्ध किसी भी तरह बन्द नहीं हो सकता ?

सब—युद्ध होगा, युद्ध बन्द नहीं होगा।

माणविका—दोनों मेरे ही गए हैं।

वामरथ—दुष्टे, तूने हमारा गए कलंकित किया। हम तुझे भी मार
डालेंगे।

माणविका—मनुष्य सब समान हैं। गए का भेद बनावटी है।

वामरथ—वकवास मत कर।

श्रुतबुद्धि—युद्ध करो।

वामरथ—आओ ! (युद्ध होता है)

माणविका—(बीच में आकर) मैं प्रार्थना करती हूँ युद्ध बन्द कर दो।

दोनों—(युद्ध करते हुए) हट जाओ हट जाओ। (युद्ध होता रहता है।
क्रोध चीत्कार से सारा आकाश गूँजने लगता है। माणविका
देर तक खड़ी रहती है।)

माणविका—(आगे बढ़कर) लो यह मेरी ओर से भेंट ! (खंग से सिर
काटकर। पहले खड़ी रहती है, फिर गिर जाती है)

(दोनों दिलों में युद्ध बन्द हो जाता है)

वामरथ—(चिल्लाकर) माणविका, यह तुमने क्या किया ?

श्रुतबुद्धि—अरे, अरे, माणविका ! यह बया कर दिया प्रिये !

(सब लोग युद्ध बन्द करके माणविका को घेर कर खड़े हो जाते हैं।)

वामरथ—अब युद्ध व्यर्थ है।

मद्रक—अब युद्ध की आवश्यकता नहीं है। किन्तु माणविका का बलि-
दान ! वह मद्रकों की बधू थी।

वामरथ—वह वामरथों की कन्या थी।

सब—वह दोनों की थी ।

श्रुतबुद्धि—आज से मद्रकों का वामरथों से कोई वैर नहीं है ।

सब—माणविका का बलिदान चिरंजीवी हो ! माणविका की जय !

हमारी कटुता, शत्रुता का अन्त हो गया । आज से हम एक
हैं । वामरथ मद्रकगण की जय !

(नेपथ्य से)

[इसके पश्चात् कई मास तक एक व्यक्ति की आवाज सुनाई देती
रही । 'माणविका ! प्रिये माणविका !' किन्तु कभी कोई उत्तर नहीं
मिला । कभी-कभी प्रतिध्वनि टकराकर कह उठती थी, 'माणविका !']

यह नाटक रेडियो-टेक्नीक के आधार पर लिखा गया है, इसलिए
यह ध्वनि-प्रधान है, संकेत तथा निर्देश प्रधान नहीं ।

—लेखक

बा और बापू
(रामनरेश त्रिपाठी)

आप हिन्दी के माने हुए कवि हैं। हिन्दी नाटकों के अभाव ने आप को हिन्दी में नाटक लिखने की ओर प्रेरित किया। आपने सबसे पहले १९३४ में 'जयंत' नामका नाटक लिखा और उसमें आपको अच्छी सफलता मिली। इसके बाद प्रेमलोक, बफाती चाचा, अजनबी और पैसा परमेश्वर नाम के नाटक लिखे। बच्चों के लिये भी आपने छोटे-छोटे रूपकों का एक संग्रह 'पेखन' नाम से प्रकाशित करवाया। आपके नाटकों का विषय अधिकतर वर्तमान सामाजिक समस्याएँ होती हैं। ऐतिहासिक पुरुषों को नाटक का विषय बनाना और फिर उसपर कल्पना की कलाई चढ़ाना आपको प्रिय नहीं।

प्रस्तुत नाटक कस्तूरबा और महात्मा गाँधी के जीवन में घटित सच्ची घटनाओं के आधार पर लिखा गया है। यह नाटक वर्तमानकाल का है इसलिए इसमें प्रभावोत्पादक शक्ति अधिक है। सम्वादों में भाषा सरल और बोलचाल की है। नाटक रंगमंच पर खेला जा सकता है।

नाटक के पात्र

कस्तूरबा		...	गाँधीजी की पत्नी
बापू		...	महात्मा गाँधी जनप्रिय नाम
अँग्रेज मित्र			
जर्मन मित्र			
थम्बो			
अँग्रेज स्त्री			
स्वयंसेविका			
डाक्टर			
नवयुवक			
संवाददाता इत्यादि ।			

(सच्ची घटनाओं के आधार पर)

समय—रात में दस बजे के लगभग ।

स्थान—दक्षिण अफ्रीका में फीनिक्स आश्रम का एक लम्बा बरामदा ।

[बरामदे में लालटेन का प्रकाश है, बरामदे में उसके बीचोबीच एक पाँत में कई सयानी लड़कियाँ अलग-अलग बिछौनों पर सोई हुई हैं । बापू एक लड़की को थपथपाकर जगाते हैं ।]

बापू—थम्बो ! उठो तो । (थम्बो अचकचा कर उठती और बापू को देखती है) देखो, बाहर से हमारे दस-बारह कार्यकर्त्ता सत्याग्रह आन्दोलन का समाचार लेकर आए हैं । उनको खाना देना है । डिग्गी, रामी, सुशीला और सोमा को भी धीरे से जगा लो और काम बाँट लो । रोटी, दाल और एक तरकारी एक घण्टे में मिल जानी चाहिए ।

थम्बो—(उठकर और सामने खड़ी होकर धीरे से) मगर आटा तो चुक गया है । चक्की पर गेहूँ गया था, पिसकर आया नहीं । चक्की वाले ने कहा—सबरे दूँगा ।

बापू—तो घर की चक्की पर पीस लेंगे । गेहूँ तो हैं न ?

थम्बो—हाँ, गेहूँ तो बहुत हैं ।

बापू—खाना तो देना ही है । (स्वगत) हमारे सिपाही हैं, आठ-दस मील पैदल चलकर खबर देने और सलाह लेने आए हैं । थक गए हैं । गृहस्थ के घर पर भूखे कैसे रहेंगे ? खाना तो देना ही होगा । [प्रकट] गेहूँ मुझे ला दो, तुम दाल और तरकारी का इन्तजाम करो । देखो, बहुत धीरे से काम करना, बा कहीं

जग न जायें । आज वे बहुत थकी हैं । इसीसे अलग सोने के लिए भेजी गई हैं । कल उन पर ज्यादा मेहनत पड़ेगी । कल सबेरे ही सत्याग्रह का कूच है । सम्भव है, दिनभर उनको खड़ा रहना पड़े ।

[थम्बो तत्काल डलिया में गेहूँ लाकर चक्की पर रख देती है, जो बरामदे के एक कोने में है । बापू चक्की पर जा बैठते हैं और पीसने लगते हैं । थम्बो दूसरी साधिनों को उँगलियों से हल्की-हल्की थपकियाँ देकर धीरे से जगाकर खड़ा करती है ।

थम्बो—(ओंठ पर उँगली रखकर) देखो, चुपचाप रसोई-घर में चलो वहीं काम है । आवाज न आने पाए बा की नींद टूट जायगी ।

[सब एक के पीछे एक जाती हैं । बापू चक्की चलाने लगते हैं । बगल के कमरे से अंग्रेज मित्र का प्रवेश ।]

मित्र—(बापू से) यह तो सोने का समय है ।

बापू—(हंसकर) तुम्हारी नींद उचट गई न ? भगवान बड़े विनोदी भी हैं, वे भक्तों की कड़ी से कड़ी परीक्षाएँ लेते रहते हैं । सत्याग्रह आन्दोलन के दस-बारह साथी कार्यकर्त्ता दूर से चलकर बेर से आए हैं । थके हैं, भूखे हैं, उनको भोजन देना है ! घर में आटा चुक गया है । देखो, अभी हुआ जाता है ।

[मित्र भी चक्की पर बैठ जाता है, और हत्था पकड़ कर चलाने लगता है । थम्बो आकर उस समय तक पिसा हुआ आटा बटोर ले जाती है । बहुत मोटे एक दूसरे जर्मन मित्र का प्रवेश ।]

जर्मन—यह क्या हो रहा है ?

बापू—(ठहका मार कर) गुदा की चक्की चौबीसों घण्टे चलती है । चलती चक्की देखकर दिया कबीरा रोय ।

दो पाटों के बीच में साबित बचा न कोय ॥

जर्मन—इसका क्या अर्थ है ?

[बापू अंग्रेजी में अर्थ समझाते हैं । जर्मन बापू के पास आता है ।]

जर्मन—अच्छा, अब मुझे दे दो, हम दोनों पीस लेंगे ।

प—(हंसकर) वाह ! मैं घर का मालिक हूँ, मेहमान मेरे हैं, उनकी सेवा के सारे काम मुझे ही करने चाहिए । हाँ, तुम मदद कर सकते हो, ताकि काम जल्द हो जाय । मैं थकूँगा, तो तुमको दे दूँगा ।

अंग्रेज मित्र—(खड़े-खड़े आप ही आप) गाँधी भी क्या विचित्र पुरुष हैं । आलस्य तो उनको छू नहीं गया है । काम छोटा हो या बड़ा सब को समान लगन से करते हैं और नीरस काम को भी अपने विनोदी स्वभाव से सरस बना लेते हैं ।

(थम्बो आकर पिसा हुआ आटा बटोर ले जाती है
अंग्रेज मित्र की नौजवान अंग्रेज स्त्री का प्रवेश ।)

स्त्री—(हंसती हुई) यह क्या हो रहा है ?

बापू—तुम्हारी भी नींद चली ? (हंसते हैं)

जर्मन—(अंग्रेज से) तुम थक गये होगे, मुझे दे दो ।

बापू—स्त्री की मौजूदगी में ये थकना स्वीकार कैसे करेगे ?

[सब हँसते हैं ।]

[थम्बो आकर पिसा हुआ आटा बटोर ले जाती है । अंग्रेज स्त्री पति के कन्धे पर उँगली से छूकर इशारा करती है । पति उठ जाता है । स्त्री उसकी जगह बैठकर बापू के साथ चक्की चलाने लगती है । हंसने की आवाज सुन, पाँच-सात स्त्रियाँ और छोटी-बड़ी कई लड़कियाँ आस-पास जमा हो जाती हैं । सब बापू को देखकर मुस्कराती हैं । बा का प्रवेश ।]

बा—यह क्या हो रहा है ?

बापू—क्या तुम अभी तक सो रही हो ? (बापू जोर से हंसते हैं ।)

बा—यह काम तो मेरा था, मुझे जगाया क्यों नहीं ?

बापू—डर के मारे ।

बा—हाँ मुझसे बहुत डरते हो न ? अच्छा, अब उठो, मैं और यह
(अंग्रेज स्त्री की तरफ इशारा करके) पीस लेंगी ।

बापू—अब थोड़ा ही सा तो है, अभी खत्म हुआ जाता है ।

बा—सत्याग्रह तो घर में भी चलता है । [अंग्रेज स्त्री से] अब तुम
सुस्ता लो ।

[अंग्रेज स्त्री उठ जाती है । बा और बापू चक्की चलाते हैं]
बापू—(हंसकर) हाँ, अब गृहस्थ का पूरा शरीर अतिथि सेवा में जुट
गया ।

अंग्रेज स्त्री—हम लोग क्या करें ?

बापू—गीत गाओ । जगरानी विहार की है । गीता गाना खूब जानती है
(जगरानी से) जगरानी ! तुम जरा “धन्य पुरुष तोरी भागि”
वाला गीत इन जर्मन मित्र को सुनाओ ।

[सब स्त्रियाँ और लड़कियाँ जर्मन मित्र की ओर देखकर खिलखिला
कर हंसती हैं । जागरानी गाती है । बाकी स्त्रियाँ और लड़कियाँ सिर्फ
टेक वाली कड़ी में उसका साथ देती हैं ।]

जगरानी—(गाती है ।)

धन्य पुरुष तोरी भागि करकसा नारि मिली । टेक ।
डेहरी ऊपर कौवा जो बोलै पाहुन आये तीनि ।
आओ पाहुन चूल्हा सेंतो कंडा लाऊँ बीनि ।
करकसा नारि मिली ॥

[स्त्रियाँ और लड़कियाँ केवल 'करकसा नारि मिली' में साथ देती हैं ।]

बापू—(बा से) ठीक तो है, पाहुन आने पर वह कंडा बीनने चली गई, तुम चक्की लेकर बैठ गईं ।

[बा लज्जाकर मुस्कुराती हैं । बापू अंग्रेजी में जर्मन मित्र को अर्थ समझाते हैं । अंग्रेज और जर्मन मित्र स्त्रियाँ और लड़कियाँ बापू का मजाक सुनकर इधर-उधर मुँह फेरकर मुस्कुराती हैं ।]

[थम्बो का प्रवेश]

थम्बो—(बापू से) खाना तैयार है, मेहमानों को लेकर आइये ।

बापू—इतनी जल्दी ! शाबाश ! अभी तो तुम आटा ले जा रही हो न ?

थम्बो—बा ने तरकारी बना दी, पकौड़ियाँ बना दीं, इतने में दाल तैयार हो गई ! आधे आटे की रोटियाँ बन गई हैं । मेहमान जाने लगेंगे, तब हम उन्हें ताजी रोटियाँ देती जायेंगी । थालियाँ लगा दी गई हैं ।

बापू—क्या बा रसोईघर से आ रही हैं ?

थम्बो—बा तो चक्की चलाते ही रसोईघर में जा पहुँची थीं ।

बापू—(बा की ओर स्नेह से देखकर) तुमको शरीर का ध्यान रखना चाहिए ।

बा—तुम जितना ध्यान रखते हो, मैं तो उससे अधिक ही रखती हूँ ।

बापू—(थम्बो से) अच्छा, थोड़ा ही-सा तो और रह गया है, इसे पूरा करके उठता हूँ । (थम्बो जाती है)

श्री पोलक—आपने इस मित्र ही को गीत सुनाने को क्यों कहा ?

[जर्मन मित्र की ओर देखकर मुस्कुराती है ।]

बापू—(हँसकर, जर्मन मित्र की ओर देखकर) इनको एक ऐसी स्त्री मिल जाय तो इनकी मोटाई पच जाय ।

[दोनों मित्र और सब स्त्रियाँ खूब हँसती हैं ।]

बा—अच्छा, गेहूँ तो खतम हो गया। तुम जाकर मेहमानों को ले आओ, तब तक मैं आटा बटोर लेती हूँ।

[बापू उठकर हाथ पैर भाड़कर जाते हैं। अंग्रेज स्त्री आटा बटोरने में बा की मदद करती है। फिर सब रसोईघर की तरफ जाती हैं। अंग्रेज और जर्मन मित्र भी उनके पीछे-पीछे जाते हैं।]
जर्मन मित्र—[चलते-चलते, आप ही आप] अद्भुत मनुष्य है। रात हो चाहे दिन, काम छोटा हो, चाहे बड़ा, घबराना तो जानते ही नहीं। और विनोदी ऐसे कि किसी साथी को भी थकावट आने नहीं देते। ऐसा मित्र पाकर मेरा तो जीवन धन्य हो गया। संसार में बा जैसी जीवन-संगिनी भी बड़े भाग्य से मिलती है।

दूसरा दृश्य

समय—दोपहर

स्थान—गुजरात का एक गाँव

[व गाँव की स्त्रियों के बीच में बैठकर चरखा चला रही है ।]

बा—(चरखा चलाती हुई) बहनों, गाँधीजी को तो सरकार उठा ले गई; अब जो काम वे हमें सौंप गए हैं, उसे पूरा करना चाहिए।

[अखबार का एक संवाददाता आकर बैठ जाता है ।]

संवाददाता—बा ! आप देश के लिए कोई संदेश देंगी ?

बा—सरकार ने देश-सेवकों के साथ जैसे बेरहमी का बर्ताव किया है, वह सभ्य कही जाने वाली सरकार के लिए शर्म की बात है। सरकार ने लाठियाँ चलवाई, नीचे गिराकर उन पर घोड़े दौड़ाये, मुँह में कपड़ा ठूसकर उन्हें खारे पानी में डुबवाया, निहत्थे देशसेवकों

पर जो अधिक से अधिक अत्याचार किया जा सकता था, किया । मैं स्वयंसेवकों को देखने अस्पताल गई थी । बिछौने पर पड़े हुए उन भाइयों को देख मरा तो कलेजा फटने लगा था । लेकिन ऐसी तकलीफें सहकर भी उन नौजवानों में जो उत्साह, वीरता और देश-भक्ति उमड़ रही है, उसे देखकर खुशी से नाचने को भी जी चाहने लगा था । सत्य के लिए ऐसे बलिदान का दृष्टान्त तो अकेले एक हरिश्चन्द्र ही का मिलता है ।

[तार वाले का प्रवेश । तार बा के नाम है, वह बा को तार देता है ।]
बा—(तार पढ़कर) तार में लिखा है—हमें कस्तूरबा की जरूरत है ।

(पास बैठी हुई स्त्रियों से) लो, मैं चली ।

एक स्त्री—आपकी तबियत अभी ठीक नहीं हुई, कल से आपने कुछ खाया भी नहीं एक दिन और विश्राम कर लीजिए, तब जाइये ।

बा—पुलिस की लाठियों को बहादुरी के साथ सहन करने वाली बहनें मुझे बुला रही हैं, मैं अब एक क्षण भी रुक नहीं सकती ।

दूसरी स्त्री—डाक्टर ने आपको आराम करने की सलाह दी है ।

बा—(भोले में कुछ रख रही हैं, उसे छोड़कर सीधी खड़ी होकर) मेरा पति जेल में है, मेरे लिए आराम की जगह वही है । (फिर झुककर भोला भरने लगती हैं)

तीसरी स्त्री—सस्ते में शरीर छूट जाय तो ?

बा—(सीधी खड़ी होकर) तो मेरा परलोक बनेगा । पति के जीते-जी और उसके पीछे चलते रहकर पत्नी का शरीर छूट जाय, तो इससे बढ़कर सौभाग्य की बात उसके लिए और क्या होगी ? ऐसा अच्छा तीर्थ मुझे कहाँ मिलेगा ?

[बा साथ के लिए जरूरी चीजें समेट रही हैं । एक स्वयंसेविका तेजी से आती है ।]

स्वयंसेविका—बा, एक हजार बहनों ने देश-सेविकाओं में नाम

लिखाया है। वे बाहर मैदान में जमा हैं। आप उन्हें क्या आज्ञा देती हैं ?

बा—(सीधी खड़ी होकर) जाकर सब को गाँव बाँट दो। सूची यह है (भोले में से निकालकर सूची देती है।) शराब की हर दूकान पर बहनें पारी बाँधकर रात दिन पहरा दें। कोई शराब लेने न पावे। सब समझा-बुझाकर वापस किए जायँ।

स्वयंसेविका—मगर अब तो सरकार शराब को गाँव-गाँव, गली-गली फेरी लगवाकर बिकवा रही है।

बा—बहनें फेरी वालों के आगे और पीछे चलें। एक भी भाई-बहन को उनके निकट न पहुँचने दें। सब के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करें।

स्वयंसेविका—एक बार थोड़ी देर के लिए आप भी चली चलतीं तो बहनों को अधिक उत्साह मिल जाता।

बा—मैं अब पहले वहाँ जाऊँगी जहाँ से तार आया है। उस गाँव के बहादुर किसानों ने देश के खातिर अपना घर-बार और अपने जानवरों को छोड़ महान् त्याग किया है। सरकार को लगान न देने से उन्हें जेल जाना पड़ा था और मार सहनी पड़ी थी। सरकार ने उनके खेत-बारी भी नीलाम कर दिए हैं। कुछ बहनों पर सरकार ने लाठियाँ भी चलाई हैं। उनमें से बहुत-सी घायल होकर अस्पताल में पड़ी हैं। अब गाँव वालों को हिम्मत बँधाने के लिए मेरी पुकार हुई है, मैं अब वहीं जाऊँगी। सब बहनों को मेरा यह सन्देश सुना दो।

स्व० से० —बहनों ने बड़े धीरज से सब कष्ट सहा है।

बा—(अपनी ही धुन में) उनको सुना दो कि इस लड़ाई में वे पुरुषों की मदद करें। बहनों में जितनी समझ होती है, उतनी पुरुषों में नहीं होती। क्योंकि बहनें दुःख की भाषा को ज्यादा अच्छी तरह समझती हैं। बहनें हिम्मत दिलाने के मौकों पर भाइयों की हिम्मत

भी दिलायें और आगे बढ़कर भी काम करें। [बाहर से मोटर का भोंपू सुन पड़ता है। क्षण भर बाद ही डाक्टर का प्रवेश।]

डाक्टर—(प्रणाम करके) अपील निकली थी कि आपको गाँवों के लिए कुछ डाक्टर और नर्स चाहिए। मैं चार डाक्टर और चार नर्स साथ लाया हूँ। कुछ नर्स यहीं तैयार कर ली जाएंगी। अब आप आज्ञा दीजिये, हम लोग कहाँ जायँ और क्या करें ?

बा—(प्रसन्न होकर, स्वगत) राम सदा सेवक रुचि राखी। (प्रकट) यह राम की कृपा है। आप बड़े मौके से आए, भगवान को घन्य-वाद ! (स्वयंसेविका की ओर इशारा करके) इस बहन को मैं सब समझा चुकी हूँ। यह आपकी व्यवस्था कर देगी। मेरी सूचना इतनी ही है कि जो बहनें सत्याग्रह की इस लड़ाई में घर में किसी बीमार को छोड़ आई हैं, खोज-खोज कर उनका इलाज कीजियेगा। बाकी काम आप स्वयं सामने देखते ही रहेंगे।

डाक्टर—काँग्रेस के सभापति ने कहा है कि मैं आपके स्वास्थ्य की देख-भाल रखूँ।

बा—(हँसकर) तो एक बार तो सभापति की आज्ञा पूरी कर ही लीजिए। फिर तो मैं कहाँ मिलूँगी ?

[डाक्टर थर्मामीटर देता है। बा बगल में लगाती हैं। फिर निकाल कर देती हैं। डाक्टर देखता है।]

डाक्टर—१०१ डिग्री बुखार है। इस हालत में मैं तो आपको चुपचाप आराम करने ही की सलाह दूँगा।

बा—(हँसकर) आजकल १०० और १०१ डिग्री बुखार तो हर वक्त ही चढ़ा रहता है। और बापू की गैरहाजिरी में काम करने का मुझे यह पहला मौका मिला है। आराम तो मुझे बापू के पीछे-पीछे चलने ही में मिलेगा।

[बा भोला उठाती है और "महात्मा गांधी की जै" बोलकर चल पड़ती है। "महात्मा गांधी की जै" "माता कस्तूरबा की जै" बार-बार सुनाई पड़ता है।]

डाक्टर—(बा के पीछे जाते हुए आप ही आप) घन्य है बा के आत्मबल को। आर्य-स्त्रियाँ रत्नाकर और महोदधि की तरह पति के जीवन से अपना जीवन मिलाकर महासागर की रचना करती हैं। बा पर समस्त भारत को गर्व होगा।

तीसरा दृश्य

समय—प्रातःकाल ।

स्थान—सड़क ।

[बापू सड़क पर जा रहे हैं। अगल-बगल और पीछे उनके सेक्रेटरी कुछ अन्य कार्यकर्त्ता और दो विदेशी पात्रों के संवाददाता बातें करते चल रहे हैं। आगे-आगे कुछ नवयुवक हाथों में काली झण्डियाँ लिए और नारे लगाते हुए चल रहे हैं। प्रायः सभी नवयुवक हाफ शर्ट और पतलून पहने हैं।]

नवयुवक—(नारे लगा रहे हैं) गांधी मुर्दावाद । गांधी वापस जाओ ।
गांधी हत्यारा है ।

एक संवाददाता—(बापू से) आपके हृदय में इन नारों का क्या प्रभाव पड़ता है ?

बापू (हँसकर) कम से कम यह तो साबित ही हो रहा है कि गांधी जीवित है ।

दूसरा संवाददाता—आपका उत्साह भङ्ग नहीं होता ?

बापू—उलटे बढ़ता है। इसमें मुझे अपने काम में सफलता दिखाई पड़ती है। निर्जीव साधियों से सजीव विरोधी अधिक बल देता है।

पहला संवाददाता—आपको भय नहीं लगता ?

बापू—मैं तो सत्य का अन्वेपक हूँ। हमारे धर्म शास्त्र में लिखा है कि
“सत्ये नास्ति भयं कचित्” (सत्य में कुछ भी भय नहीं होता)
मेरा तो अनुभव है कि सत्य को भय से लपेट कर आगे
करोगे, तो हार जाओगे।

[इस तरह चलते हुए बापू और उनके साथी रङ्गमंच के बाहर
चले जाते हैं।]

चौथा दृश्य

समय—रात, नौ बजे।

स्थान—बापू के रहने का कमरा !

[बापू के कमरे से लगा हुआ एक दूसरा कमरा है, जिसके सामने
बरामदा है। उस कमरे में बा रहती है। बापू भीतर के दरवाजे से
बा के कमरे में आते हैं। लालटेन जल रही है। बा का बिछोना जमीन
पर बिछा है। वे सोने की तैयारी में हैं। बापू को देखकर बा बैठे-बैठे
उनकी ओर देखने लगती हैं।]

बापू—जाड़ा जोरों का पड़ रहा है। लड़के बाहर बहुत तकलीफ पायेंगे,
उनको इस कमरे में ले लो न ?

बा—(भुँभलाकर) अपने कमरे में रख लो न ? जो दिन में राह
चलना मुश्किल कर देते हैं, काली भण्डियाँ दिखलाते हैं, रात
में भी दरवाजा घेर कर बैठते, भद्दी भद्दी बातें बोलते हैं वे मुझे
प्रिय नहीं हैं। तुम्हें बहुत प्यारे हैं, तो उन्हें अपने ही पास रखो।

बापू—मुझे तो अप्रिय नहीं लगते।

बा—तुम स्त्री के हृदय की बात क्या जानो ?

बापू—हो सकता है। मेरे कमरे में कई आदमी लेटे हैं, जगह की कमी

है इसलिए कह रहा हूँ । [हंसकर] और अभी तो इस कमरे में आधा हिस्सा मेरा भी है ।

बा—तो क्या हुआ ? तुम्हारे कमरे में मेरा आधा हिस्सा नहीं है ।

बापू—जरूर है । मैं तुम्हारे लिए तो जगह निकाल सकता हूँ, तुम उसमें चली चलो, यह कमरा लड़कों को दे दो ।

बा—[दृढ़ता के स्वर में] मैं अपना कमरा नहीं छोड़ूँगी ।

(बापू वापस जाते हैं । किवाड़ ढकेलते हैं, बा कुछ मिनटों तक चुपचाप बैठी रहती है । फिर उठती है और लोहे का चूल्हा जलाती हैं । उस पर पतीली में पानी रखती है । बापू बा की पीठ की ओर पड़ने वाले दरवाजे को बहुत धीरे से थोड़ा-सा खोल कर देखते हैं और मुस्कराते हुए उसे धीरे से बन्द कर लेते हैं । बा आलमारी खोल कर प्याले, तश्तरिया, काफी, चीनी और दूध निकालती हैं । प्याले और तश्तरियों को बाल्टी में रक्खे हुए पानी से धोती हैं । सब को अँगोछे से पोंछ कर एक पंक्ति में रख देती हैं । डिब्बे में से काफी निकालकर पतीली में डालती है । थोड़ी देर बाद उसमें चीनी और दूध मिलाली है और उसे ढक देती है । फिर आलमारी खोलकर बिस्कुट का टिन निकालती है । उसमें से फी लड़का दो बिस्कुट के हिसाब से बिस्कुट निकाल कर एक बड़ी तश्तरी में रख देती है और टिन और डिब्बों को आलमारी में रख आती हैं । फिर बरामदे में खुलने वाला दरवाजा खोलकर खड़ी होती हैं; और ताली बजा कर एक लड़के को बुलाती है । एक लड़का अन्दर आता है ।)

बा—देखो, बेटा ! तुम अपने साथियों को भी बुला लो । मैं कुछ कहना चाहती हूँ ।

[लड़का जाता है और सब लड़कों को लेकर अन्दर आ जाता है । लड़के जाड़े के कपड़े पहने हैं । कुछ धोती और पतलून पहने हैं ।]

बा—(खड़ी होकर सबसे) देखो, बेटा ! सरदी बहुत है, बाहर बैठे-बैठे तकलीफ पाओगे । बापू सोने चले गये । अब चार बजे उठेंगे ।

तुम सारी रात बैठ कर क्या करोगे ? कमरे में आकर सो जाओ, मैं तुम्हें ठीक साढ़े तीन बजे जगा दूंगी । चार बजे तुम तैयार होकर बापू के सामने चले जाना । लड़के एक दूसरे का मुंह ताकते हैं एक-एक प्याला काफी पी लो, और दो दो बिस्कुट खा लो । दरी पर सो जाओ, ओढ़ने के लिए मैं कम्बल दे दूंगी ।

यह कहकर बा बैठकर प्यालों में काफी डालने लगती हैं । लड़के तत्काल निर्णय कर लेते हैं और प्यालों के पास चुपचाप एक पंक्ति में बैठ जाते हैं । हर एक दो दो बिस्कुट लेता है और खाकर काफी पीने लगता है । बा कोने में तह करके रखे हुए कम्बल उठा उठा कर लड़कों के सामने दरी पर रख देती है । लड़के काफी पीकर एक-एक करके प्याले और तश्तरियाँ बाहर ले जाकर धो लाते हैं और कमरे के एक कोने में रखे हुए रैक पर रख देते हैं । फिर सब काली भंडियाँ समेट कर एक तरफ रख देते हैं और कम्बल ओढ़कर दरी पर सो जाते हैं । सब के लेट जाने पर बा बिछौने पर जाती है । लालटेन रात भर जलती रहती है । कमरे में सब सोते हुए दिखाई पड़ते हैं ।

मेज पर टाइमपीस घड़ी रखी है । थोड़े समय बाद सुई को तीन पर कर देना चाहिए । तीन बजते ही बा उठती है । घड़ी की ओर देखती हैं । फिर कोयले की अँगीठी जलाती हैं । पतीली में पानी भरकर चूल्हे पर चढ़ा देती है । जितने लड़के हैं, अखबार के उतने टुकड़े फाड़कर सब पर रैक पर रखी हुई शीशी से दन्तमंजन निकाल कर रखती है । ठीक साढ़े तीन बजे हर एक लड़के के सिर पर हाथ रखकर जगा देती हैं । लड़के उठकर कम्बलों को तह करके कोने में रख देते हैं । तब तक बा पतीली के गरम पानी में काफी डाल कर उसे ढंक देती है ।

बा — [स्नेहपूर्ण दृष्टि से देखकर] बेटा ! तुम लोग हाथ मुंह धो लो । रैक पर मंजन रखा है, मंजन कर लो । फिर आकर काफी ले लो । तब तक चार बज जायेंगे, बापू बाहर आयेंगे तुम लोग भी अपनी ड्यूटी पर तैयार रहो ।

[लड़के मोह-मुग्ध की तरह चुपचाप अपना-अपना मंजन उठा लेते हैं। एक लड़का बाल्टी और लोटा बाहर ले जाता है। सब लड़के बाहर चले जाते हैं। बा तौलिए से प्याले और तश्तरियाँ पोंछकर तरतीब से रख देती है काफी छानकर उसमें लाईं थीं, मिलाती हैं। इतने में लड़के रुमालों से हाथ-मुँह पोंछते हुए अन्दर आ जाते हैं। और प्यालों के पास बैठ जाते हैं। वे अत्यन्त प्रेम से बा का मुँह देखते हैं। बा सबके प्यालों में काफी डाल देती हैं। लड़के चुपचाप पीते हैं और उठ उठकर बाहर जाकर प्याले और तश्तरियाँ धो लाते हैं और रैक पर रख देते हैं। बा काफी बाँट कर स्वयं दंतमंजन लेकर बाहर चली जाती हैं। सब लड़के खड़े-खड़े विचार करते हैं।]

एक लड़का—मैं तो घर जाऊँगा। मैं बापू से लड़ सकता हूँ, बा से नहीं।

दूसरा लड़का—बा के मन को जरा भर भी कष्ट पहुँचाने की मेरी तो हिम्मत नहीं।

तीसरा लड़का -- बा से हम लोग हार गए।

कई लड़के—चलो, सभी घर चलें।

[बा कमरे में आती है]

बा—बेटा ! बापू अब बाहर निकलने ही वाले हैं। अपनी ड्यूटी पर जाओ न ?

एक लड़का—(बा का पैर छूकर) बा ! हम लोग अपना कर्त्तव्य निश्चित कर चुके हैं।

(लड़के एक-एक करके बा का चरण छूते हैं और बाहर जाते हैं)
बा—(सबको आशीर्वाद देती है।) बेटा सुख से रहो, जीवन को यशस्वी बनाओ।

[लड़कों के बाहर जाने पर बा भी उसी द्वार से बाहर चली जाती है]

देवताओं की छाया में

[दुःखान्त व्यंग्य]

उपेन्द्रनाथ अशक

आप हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार तथा कहानी लेखक हैं । साथ ही आपने कविताएँ व नाटक भी लिखे हैं । उनके नाटकों के पात्र जन साधारण में लिये गये हैं उनमें वर्णित समस्याएँ हमारे जीवन की दिन प्रतिदिन की समस्याओं से ही ली गई हैं । इसीलिये उनके नाटकों में हमें अपने ही जीवन की भाँकी सी दिखलाई देती है । हिन्दी में प्रहसन व व्यंग नाटक लिखकर आपने विशेष ख्याति पाई है । सम्वादों की भाषा सरल तथा साधारण बोलचाल की मुहावरेदार होती है । इन्हीं कारणों से आपके नाटक न केवल सुपाठ्य हैं वरन् पूर्ण रूप से अभिनेय भी हैं ।

प्रस्तुत नाटक निम्न वर्ग के मुसलमान परिवार की जीवन की समस्या को केन्द्र बना कर लिखा गया है । वर्तमान सभ्यता का प्रभाव किस विकृत रूप से इस समाज पर पड़ता है यह दिखलाने में नाटककार बहुत सफल रहा है । किस तरह वर्तमान सभ्यता की तड़क भड़क केवल नकल बन कर इनके जीवन में प्रवेश करती है यही इसका व्यंग है । पर यह कितना दुख पूर्ण !

नाटक के पात्र

मरजाना

नूरी

बेगां

रज्जी

भरी

रहीम

सादिक

चौधरी, जलाल, ताफी आदि

[उन्नति के इस युग में, जब नागरिकों के जीवन का स्तर दिन-प्रति दिन बढ़ रहा है और नगरों के तंग, गंदे सीलदार मकानों में, उनका दम घुटने लगा है, बड़े बड़े नगरों के इर्द-गिर्द मिलों तक नयी आबादियाँ बसती चली जा रही है, जिनमें से कई गांवों के समीप तक चली गयी हैं।

काकूके ऐसी ही एक नही आबादी के पास दो अढ़ाई सौ कच्चे घरों का एक गाँव है। एक व्यवसायी सोसाइटी ने, जो शिष्ट-व्यवसाय की कला में निपुण है, इसके पास तीन चार सौ एकड़ ऊसर धरती सस्ते दामों मोल लेली है और इस अपील पर कि उस धरती पर एक नये समाज की नींव रखी जायगी, जो संप्रदाय के स्थान पर मानव को अपने प्रेम का भाजन बनायगा और देश के दीन हीन कृषकों का सुधार करेगा। मेहगें दामों प्लाट बेच कर 'देव नगर' नाम से एक नयी बस्ती का सूत्र-पात कर दिया है। निकटवर्ती गाँवों के श्रमी वहाँ सुबह सात आठ बजे से शाम के सात आठ बजे तक सख्त सर्दी अथवा सख्त गर्मी में काम करते हैं और पाँच छः आने दैनिक मजूरी पाते हैं और वे लोग पत्र-पत्रिकाओं में बड़े गर्व-रफीत स्वर में घोषणा करते हैं कि उन्होंने लाखों रुपये देहात में वितरण कर दिये हैं। और उनके नगर के निकटवर्ती गाँव सम्पन्न हो रहे हैं।

इसी काकूके के एक आँगन में पर्दा उठता है।

मरजाना बैठी ओखली में धान कूट रही है। ओखली धरती में गड़ी है और इसके इर्द-गिर्द में जरा जरा ऊँची मिट्टी की तह जमा कर गोवरी*कर दी गयी है। मूसल की धमक से धान उछल उछल कर

बाहर बिखर जाते हैं और वह उन्हें फिर समेट, ओखली में डाल कर कूटे जाती है !

मरजाना सोलह सत्रह वर्ष की ग्रामीण युवती है। शरीर भरा गठा है, रंग गोरा, लेकिन नासाफ़ बाल रखे और उलभे—दो दो चार चार लटें दोनों ओर कपोलों पर बिखरी हुई हैं। ओढ़नी के नाम पर पुरानी गर्म लोई का टुकड़ा सिर पर है, जो धान कूटते समय कंधों पर आ रहता है।

ओखली के दायीं ओर, मरजाना के पीछे, रसोई-घर है, जिसका चौखट-हीन दरवाजा कोने में है। सामने दो कोठरियाँ हैं, जिनमें से एक का दरवाजा खुला है और एक का बन्द। एक तीसरी कोठरी का दरवाजा रसोई घर के बे चौखट के दरवाजे में से दिखायी देता है। रसोई-घर की दीवार सात आठ फुट से कुछ ही ऊँची है। इसमें एक झरोखा है जिसमें से धुआँ निकल कर दीवार को सियाह कर चुका है। इसी झरोखे के नीचे खूँटी से छाज लटक रहा है।

बायीं ओर तथा रसोई-घर के इधर को दायीं ओर, कच्ची, रसोई घर जितनी ही ऊँची, चार दीवारी है।

आंगन में एक चारपाई पड़ी है, जिसके पाये और बान बेहद घटिया किस्म का है। इसी चारपाई के पास बायीं ओर को कुछ हट कर, धरेक (बकायन) का एक नवयुवक पेड़ है, जो सर्द-हवा के झोंकों से कभी कभी ठिठुर उठता है।

मरजाना चुपचाप धान कूटती है। खांजन* का ढेर उसके पास लगा है। कार्तिक को बीते कुछ ही दिन गुजरे हैं आकाश पर आज सारा दिन बादल रहे हैं और धूप अब निकली भी है तो श्वेत श्वेत सी

*कूटे हुए धान को पंजाब में खाजन कहते हैं।

मुरझायी मुरझायी सी, यक्ष्मा से पीड़ित की मुस्कान की भाँति—सुखी कहाँ पीलापन तक उसमें नहीं है।

सर्द-हवा का एक भोंका आता है और एक झुरझुरी सी लेकर तथा ओढ़नी को सिर पर करके वह तीव्र-गति से मूसल चलाने लगती है।

गली के दरवाजे से भागती पर ठिठुरती हुई नूरी आती है और धम से आकर मरजाना के सामने बैठ जाती है, मरजाना नहीं बोलती, सिर नीचा किए चुपचाप धान कूटे जाती है।

नूरी : मरजी, मरजी !

(मरजाना चुप मूसल चलाये जाती है)

—: (प्यार से) मरजानी !

(मरजाना चुप)

—: (चिड़कर शरारत से) ई मर-जानी !

मरजाना—(सिर उठाकर और झटके से वालों को लटों को पीछे करके)
मैंने तुम्हें कितनी बार कहा है नूरी कि गाली न दिया करो !

(फिर मूसल चलाती है ।)

नूरी—ओहो, बड़े मिजाज तेज है मेरी बीबी के आज रहने से झगड़ा हो गया होगा न....

मरजाना—(कूटना छोड़कर) मैं कहती हूँ तुम बाज न आओगी !

(मुख लाल हो जाता है ।)

नोट—(रंगशाला के निर्देशक के लिए) रसोईघर दर्शकों की दायीं ओर रंगमंच के आधे पिछले हिस्से की ओर है, रसोई-घर के इधर की ओर, आँगन की दायीं दीवार के साथ कुछ पौधे लगे हुए हैं। मरजाना इस तरह बैठी है कि रसोई-घर उसके पीछे और सामने की कोठड़ियाँ उसके दायीं ओर को हैं, बकायन का पेड़ और गली का दरवाजा सामने है। गली का दरवाजा काफी इधर को है।

✽मर-जानी पंजाबी की आम घरेलू गाली है, मरने योग्य।

नूरी—और मैं पूछती हूँ बंदर की बला तबेले के सिर क्यों ? भाई रहीम रूठ गये होंगे तो मान जायेंगे । कब तक रूठेंगे ? आखिर पड़ना तो उन्हें एक दिन तुम्हारे ही पाँवों पर है ना, आज मँगेतर हैं तो कल...

मरजाना—(मूसल उठाकर) तू पिटे बिना न मानेगी ।

[नूरी उठकर भागती है, मरजाना मूसल उठाकर उसके पीछे भागती है । दोनों चारपाई के इर्द-गिर्द चक्कर काटती है, बकायन का पेड़ धीरे-धीरे हिलता है । बेगां तीसरी कोठी से, रसोई-घर के दरवाजे में से होती हुई, निकलती है । खूँटी से छ्वाज उठाती है ।]

बेगां—अरी यह क्या धमाचौधड़ी मचा रखी है । यह धान कूटे जा रहे हैं या धरती !

[ओखली के पास बैठकर खांजन फटकने के लिए छ्वाज में भरती है]

— :शर्म नहीं आती तुम्हें ।

[नूरी धम से आकर उसके पास बैठ जाती है । तनिक लज्जित सी होकर मरजाना भी आ बैठती है, मूसल चलाने लगती है । बेगां धान फटकती है ।]

—इतनी बड़ी हो गयी है, अभी बच्चे की तरह भाग दौड़ कर रही हैं, तुम्हारे जितनी लड़कियां तो दो-दो बच्चे की माएँ हैं । (हाथ से भूसी चावलों से अलग करती हुई) और क्यों री नूरी, कोई काम नहीं तुम्हें ?

नूरी—मैं तो चाची, भरी के पति की बात सुनाने आयी थी कि वह मेरे पीछे पड़ गई ।

मरजाना—(कूटना छोड़कर) गाली नहीं दी तूने ?

नूरी—मेने गाली दी, अल्लाह कसम मेने तो प्यार से मरजा कहकर बुलाया था !

मरजाना—(क्रोध से) मर....जानी !

बेगां—(फटकना छोड़कर) क्या हुआ भरी के शौहर❀ को।

नूरी—मैंने 'मर-जानी' कब कहा, रूठी बैठी है किसी से और लड़ती है किसी से, आ लेने दे भाई रहीम को.....

[शरारत से मरजाना की ओर देखती है, मरजाना आग्नेय दृष्टि से एक बार उसकी ओर देखकर फिर जल्दी-जल्दी घान कूटने लगती है।]

बेगां—(उत्सुकता से) भरी के खाविंद❀ की क्या बात थी ?

नूरी—कल टकुआ‡ लेकर अपनी सास के घर जा पहुँचा ! रज्जी लाहौर गई हुई थी। घर में उसकी बहन और उसकी लड़की थी। वह भरी को जबरदस्ती उठाने लगा। बहन ने रोका तो पिल पड़ा उस पर कहने लगा मैं कत्ल कर दूँगा सबको। उसने हाथ-तोबा मचायी तो लोग इकट्ठे हो गये।

[रज्जी क्षत-विक्षत, परेशान और सजल आँखें लिये प्रवेश करती है]

रज्जी—(आते आते) सुनी मरजी की अम्मा तूने इस लड़के की बात। मैं तो अभी आयी लाहौर से, पता चला कि रात कत्ल करने चढ़ दौड़ा। (बैठकर आँसू पोंछते हुए आर्द्र कण्ठ से) मेरी बहन तक पर हाथ उठाया उसने। मैं तो अब पंचायत में फैसला करवाकर रहूँगी।

बेगां—मैंने अभी नूरी से सुना, पर वह तो गया हुआ था।

रज्जी—गया था जहन्नम* में। जब से इधर बसें चलीं और दूध शहर जाने लगा और गायें-भैंसों का मोल चढ़ गया तो अपने जानवर बेचकर सपूत ने खा-उड़ा डाले। फिर कर्ज लेकर यहाँ हलवाई की दुकान खोली। जो बनाता था वह अपने यार-दोस्तों को खिला देता था कि वे हमें तंग करें। छै रुपया

निगोड़ा साल का किराया, वह तो दुकान से निकाल न सका और क्या तीर मार लेता ? फिर फेरा लगाने लगा, पर फेरा लगाना क्या आसान है ? जवानों की मौत मरना है—ऊसर में खोंचा उठाए गाँव-गाँव फिरना, पैसा-पैसा करके दाम बटोरना । उसे छोड़ ताँगा चलाने लगा । फिर सुना था फौज में भूरती होने चला गया है । मैंने सुख की साँस ली थी ! कल फिर कहीं आसमान से आ टपका ।

[धीरे-धीरे सिसकने लगती है । बेगां एक दो बार धान फटकती है । मरजाना चुपचाप अपने विचारों में मग्न धान कूटे जाती है ।]

रज्जी—(आँसू पोंछकर) करने को काम की क्या कमी है ? अपनी खेती बाड़ी तो खैर गई भाड़ में ! खेत ही मेरे कमाऊ ने गिरवी रख दिये । पर पास नगर बस रहा है । खुदा ने घर बैठे रोजी दी है ? दूसरे लड़के भी मजूरी करते हैं । लेकिन मजूरी को वह अपनी हतक* समझता हैं । (फिर गला भर आता है) आपस बेकार फिरता है और गुस्सा निकालता है मेरी गरीब बेटी पर ।

[गला साफ करती है और दुपट्टे से आँसू पोंछती है ।]

बेगां—[फटकना छोड़कर] हाँ और कुछ नहीं तो पाँव छै आने रोज तो कमाकर ला ही सकता है ।

रज्जी—कमा कर क्या लायगा खाक । उसे तो उनकी नकल की पड़ी हुई है । 'मैं इसे पर्दा न करने दूँगा,' 'मैं इसे सैर कराने ले जाया करूँगा,' 'यह कुछ पढ़ती नहीं'—कोई पूछे तूने आठ जमातें पढ़ के कौन सी कलकटरी कर ली है ?—दो एक बार लाहौर गया, वहाँ से खुशबूदार साबुन, तेल और न जाने क्या क्या फिजूल की चीजें ले आया । जो दस बीस बीघे

जमीन थी, इन्हीं लच्छनों के मुँह गिरवी रख दी, ढोर डंगर तक ठिकाने लगा दिये; भरी की 'टूम्बें'*तक बेच बाच कर खा डालीं। और इस पर दम वही है कि मैं टोकरी न उठाऊँगा ? भला बीबी बताओ हम उन अमीरों की बराबरी कर सकते हैं ?

बेगां—अल्लाह अल्लाह करो !

[सहानुभूति से भरी लम्बी साँस खींचती है ।]

रज्जी—मैं तो किसी के मुँह दिखाने की नहीं रही मरज़ी की अम्मा ! सब से बैर मोल लेकर तो मैंने यहाँ नाता किया। भरी के ताऊ अपने लड़के के लिए कितना जोर दे रहे थे ? पर ननद पीछे पड़ी थी इस अपने कपूत के लिये ! और फिर अल्लाह जानता है जो मैंने एक पैसा भी लिया हो। सोचती थी, सब यही कहेंगे कि राँड़ लड़की का दाम लेकर मौज उड़ा रही है।

[बेगां फिर खाँजन फटकने लगती है। मरजाना चुपचाप धान कूटे जा रही है। जैसे उसे भरी की इस अम्मा की दुख गाथा से कोई दिलचस्पी न हो, अथवा वह अपने ही किसी दुख में निमग्न हो।]

रज्जी—(पूर्ववत आर्द्र-कण्ठ से) मैं तो कुछ नहीं चाहती भाई (हाथ से हवा को चीरती है) वह चोरी करे, यारी करे, दुकान डाले, ताँगा चलाये, बस हमें खुलासी दे।

[उठकर पोधों में गला साफ करने जाती है फिर आकर बैठ जाती है]

नूरी—फूफी, अगर वह ले जाना चाहता है तो तुम क्यों नहीं भेज देती भरी को उसके साथ ?

रज्जी—न बीबी अब नहीं। दो बार भेज चुकी हूँ। वह उसे बेतरह पीटता है। उस की परदादी तक ने जो बातें नहीं कीं, वे सब

उसे करने को कहता है नहीं करती तो गंडासा^x और टकुआ दिखाता है। भरी को तुम जानती हो, सारा गाँव उस की गवाही देगा। उस बेजबान का क्या है ? जैसे धरती को पीट लिया, तैसे उसे पीट लिया ! जमीन जायदाद खुद गिरवी रख दी, जो दो गहने थे, खा उड़ा डाले। अब गुस्सा उस पर उतारता है। भरी के ताऊ उस ननद के घर गये, यह सुनकर कि भरी को पीटा जा रहा है। बस उन्हें देखकर तो सादिक को खून चढ़ गया। कहने लगा मैं इसे यहीं कत्ल कर दूंगा। तब उस भलेमानुस ने कहा कि बेटा तू कत्ल क्यों करेगा, मैं ही इसे साथ ले जाता हूँ और अभी दस दिन नहीं हुए इस बात को कि टकुआ लेकर चढ़ दौड़ा (धीरे धीरे सिसकती है, फिर रोते रोते) न भाई मैं नहीं भेजती (फिर आँसू पोंछकर) बखशो बी बिली, चूहा लँडोरा ही भला ! भाड़ पड़े सोना जो कान खाय। मैं तो बीबी, पहले ही दुखों की मारी हूँ। भरी दो वर्ष की थी जब-उसके अब्बा अल्लाह को प्यारे हो गये ! तब से जाने किस तरह मेहनत-मजूरी करके इसे पाला। सुनती थी लड़का अच्छे मिजाज कानहीं, लोगों से लड़ भगड आता है, पर ननद ने कहा—लोगों से कोई लाख लड़े अपने घर से तो सब बना कर रखते हैं। (सहसा गला भरकर) न भाई, मैं तो अब कुछ नहीं चाहती, बस उसे खुलासी दे दे।

[आँखों से आँसू पोंछती है। ठंडी हवा का एक भोंका आता है। धरेक का विटप भुरभुरो सा लेता है।

बेगाँ—सूखी ठंड पड़ रही है (भुरीभुरी) हड्डियों में घुसी जा रही है।
नूरी बेटी जरा रसोई-घर से अंगीठी में कोयला तो डाल ला।
हाथ सन्न हो रहे हैं।

^x चारा कतरने वाला अस्त्र जिसकी एक ही चोट से गर्दन तक काटी जा सकती है।

(तूरी उठकर जाती है ।)

—और तू मरजाना कोई कपड़ा ही ले ले, यह पाला तो...

[फिर भुरी भुरी लेती है । मरजाना उत्तर नहीं देती । ओखली से कूटे हुए धान निकाल कर बाहर कर देती है, पास पड़ी टोकरी से और डाल लेती और फिर मूसल उठा लेती है ।]

रज्जी—मैं तो मरजी की अम्मा, परसां ही आ जाती, पर ठंडी सड़क पर इमारत गिर पड़ी ।

बेगां—इमारत गिर पड़ी ?

रज्जी—हाँ, ठंडी सड़क के ऐन ऊपर, किसी कम्पनी का दफ्तर बन रहा था, तीन मंजला, ठेकेदार ने मसाला हल्का लगाया था न जाने क्या हुआ, बह तीसरी मंजिल की छत आ पड़ी । बीस एक मजदूर नीचे आ गये ।

(मरजाना अचानक कूटना छोड़ देती है और मुनने लगती है)

बेगां—बीस मजदूर नीचे आ गये ! अल्लाह रहम कर कोई मरा तो नहीं ?

रज्जी—मेरे भाई का लड़का भी काम करता था, वह तो बच गया सिर्फ एक बाजू ही टूटा, लेकिन कई बेचोरे दब गये (तनिक काँपकर) दो बेचारे तो पहचाने भी न जाते थे । लिलटन (लिटल) की छत थी । लोहे की खपचियाँ उनके आर पार हो गयीं । हड्डियाँ निकल आयीं । हे मेरे अल्लाह....

मरजाना—(अचानक भर्राई हुई आवाज में) अम्मा ?

(उसके स्वर की चिन्ता और आर्द्रता से सभी चौंक पड़ती हैं।)

बेगां—क्या बात है ?

मरजाना—रहीम को अब काम पर न जाने देना ?

बेगां—क्यों बेंटी

मरजाना—मैं जो कहती हूँ !

(स्वर और भी आद्र है ।)

बेगां—पर क्यों ?

मरजाना—इस नगर में भी तो इतने ऊँचे ऊँचे मकान बनते हैं और रहीम भी कुछ ऐसा ही नाम लिया करता है, निलटन या लिलटन क्या, जिसकी छतें पड़ती हैं ।

बेगां—अल्लाह सब का रखवाला है बेटी !

मरजाना—वह तो है, पर माँ कौन जाने (सिहर कर) कोई पाँच छे आने रोजाना के लिए जान तो नहीं गँवा लेता ।

रज्जी—बच्ची जिसकी आजाय उसे कौन बचा सकता है और जिस की बनी है उसे कौन मिटा सकता है । उन बेचारों की तो आ लगी थी, नहीं हजारों मकान बनते हैं, कोई सब थोड़े ही गिर पड़ते हैं । और फिर एक ताँगे वाला वहाँ ताँगा खड़ा करके आराम कर रहा था, वह मर गया, एक साइकिल वाला मर गया । वे कोई मजदूर थे ?

[मरजाना फिर मूसल की चोट लगाती है, पर मन उसका उद्विग्न है, एक चोट नहीं लगाती की मूसल रख देती है ।]

मरजाना—पर माँ और भी तो काम हैं वहाँ—सड़कें बनाना, मिट्टी उठाना, पानी लाना, सफाई करना—वह उनमें से कोई क्यों नहीं कर लेता । ये 'लिटन' के मकान.....रहीम आज आ जाय, मैं तो उसे न जाने दूंगी ।

नूरी—(शरारत से) अभी से इतना हक जमाने...

[परन्तु ज्यों ही वह मरजाना की ओर देखती है, उसकी आँखों की करुण जैसा उसका गला दबा लेती है और शेष शब्द उसके मन ही में रह जाते हैं ।]

बेगां—(आकाश की ओर देखकर) शाम हो चली है, अभी रहीम आ जायगा तो रोक लेना ।

नूरी—(खड़ी होकर अंगड़ाई लेती है) यह कैसा सेंदूर सा चारों ओर

फैल गया है और वह देखो पच्छिम के आसमान पर बादलों का कैसा नगर सा बस गया है। जाने इनकी छतें भी 'लिटन' की होंगी।

[दोनों बूढ़ियाँ हँसती हैं, किन्तु मरजाना इस हँसी में योग नहीं देती, वह बराबर धान कूटे जाती है।]

नूरी—लिटन की छतें.....

[स्वयं अपनी बात पर हँसने लगती है। तभी बाहर कुछ शोर मच उठता है और बगूले की भाँति भरी प्रवेश करती है।]

रज्जी—(घबरा कर) क्या बात है, क्या बात है ?

भरी—मकान की छत आ रही है।

रज्जी—(चेहरे का रंग उड़ जाता है) किस मकान की ?

भरी—वह जो देव नगर में तीन मंजिल का बन रहा था।

(मूसल छोड़ कर मरजाना दरवाजे की ओर भागती है।)

बेगां—(उठकर उसके पीछे भागती हुई) मरजी, मरजी !

मरजाना—मैं जाऊँगी।

बेगां—पागल हो गयी है, जवान लड़कियाँ इस तरह कहीं बाहर जा सकती हैं ? मोमिन के घर में....

मरजाना—माँ....!

(ओढ़नी से मुँह ढाँप कर ऊँचे ऊँचे रोने लगती है।)

बेगां—(उसके पास जाकर उसके कंधे को थपथपाती हुई) दांवानी न बन ! अल्लाह सब का रखवाला है, चल बैठ मैं देखती हूँ।

[गली के दरवाजे में जा खड़ी होती है, रज्जी भी उठकर उसके पास चली जाती है, नूरी भी वहीं चली जाती है। मरजाना चुपचाप जाकर ओखली के पास लगभग गिर पड़ती है। सिर्फ भरी धरेक का सहारा लिये मौन खड़ी है। बाहर शोर क्षण-प्रतिक्षण बढ़ता जाता है।]

बेगां—(बाहर गली में किसी भागते व्यक्ति से) चौधरी....सुनो तो...

चौधरी (चौधरी हाँपता-हाँपता सा दरवाजे में आखड़ा होता है।)

चौधरी—गजब हो गया मरजी की अम्मा, वह जो सब से बड़ी कोठी थी न किसी रायसाहब की.....तीन मंजिलों की.....जो इधर की ओर सड़क पर बन रही थी.....उसकी लिटल की छत आरही है।

रज्जी और बेगां (दोनों)—लिटल की !

मरजाना—(आकुल होकर उठती है) माँ !

बेगां—(मुड़ कर) मरजी !

[आवाज चीख की हृद को पहुँची हुई है जिसमें क्रोध भी है और चिन्ता भी]

—:बैठ तू वहाँ। मैं जाकर देखती हूँ। खबरदार जो दरवाजे के बाहर पाँव रखा।

(दोनों बाहर जाती हैं)

नूरी—ठहरो फूफी मैं भी आयी।

बेगां—तू मरजी के पास बैठ।

नूरी—उसके पास भरी बैठी है।

[निकल जाती है। किवाड़ बन्द हो जाते हैं और बाहर से साँकल लगने की आवाज आती है।]

मरजाना-फिर धम से बैठ जाती है और ओढ़नी से मुँह ढाँप कर रोने लगती है। कुछ क्षण तक मौन छाया रहता है जिसमें धरेक का पेड़ काँपता है और हवा के झोंकों से अंगीठी पर पड़ी हुई राख उड़ती है। भरी धीरे धीरे मरजाना के पास आती है।]

भरी—मरजी।

[मरजाना नहीं बोलती न मुँह से ओढ़नी हटाती है। हवा का तेज झोंका आता है, वह काँपती है।]

:—मरजाना यहाँ ठण्ड है, अन्दर चलो।

[मरजाना नहीं हिलती]

:—तो फिर अंगीठी में कोयले डाल दूँ ।

[रसोई-घर से एक बर्तन में कोयले लाकर अंगीठी में डाल देती है ! मरजाना चुप बैठी रहती है ।]

:—अन्दर से लिहाफ लाकर डाल दूँ । यहाँ बहुत सर्दी है ।

[जाने लगती है । मरजाना उसका हाथ पकड़ लेती है, और ओढ़नी हटाकर विगलित-दृष्टि से उसकी ओर देखती है । देखती है । भरी उसे आलिंगन में कस लेती है ।]

—:हौसला करो । खुदा पर भरोसा रखो अल्लाह सब ठीक करेगा तुम तो योंही डर गई हो । अभी भाई रहीम हंसते खेलते आ जायेंगे ?

मरजाना—यह, जरूर....

(ऊँचे ऊँचे सिसक उठती है ।)

भरी—उसके कंधे को थपथपाते हुए मरजाना मरजी ।

मरजाना—(भरे गले से) मुझे बुरे बुरे ख्याल आ रहे हैं, मेरी आँख फड़क रही है ।

भरी—अल्लाह रहम करेगा ।

मरजाना—जरूर कुछ बुरी बात होगी ।

भरी—[उसके कंधे को प्यार से थपथपाते हुए] हौसला करौ....अल्लाह

मरजाना—[ओढ़नी चेहरे से हटा कर आँसू पोंछते हुए] तुम नहीं जानती भरी, आज सुबह मैंने उसे जाते समय नाराज कर दिया था । वह मुझे छेड़ने लगा और मैंने उसका हाथ भटक दिया और वह रुठ गया ।

भरी—हम लड़कियाँ हैं, हम अपनी इच्छा से हंस नहीं सकतीं, बोल नहीं सकतीं, मिलजुल नहीं सकतीं । चाहे जी में घुट घुट कर मर जायें ! मुझे ही देख लो । माँ चाहती है कि यहाँ से खुलासी हो तो ताऊ के लड़के के घर बैठा दें और उसकी निसबत मुझे सादिक ही मंजूर है ।

✓मुक्ति❀अपेक्षा ।

मरजाना—[आंसू पोंछकर] पर वह तो तुम्हें मारता है ।

भरी—मारता तो है, पर मैं मार खा लेती हूँ ।

मरजाना—तो फिर तू आई क्यों ?

भरी—मैं कब आती थी । ताऊ को देखकर उसके सिर पर तो खून सवार हो गया, वह गंडासा उठा लाया और ताऊ मुझे ले आये ।

मरजाना—तो अब चली जा !

भरी—यही तो दुख है जाऊ कहाँ ? वहाँ तो खाने को सूखी रोटी भी नहीं । कल जब टकुआ लेकर चढ़ आया तो मैंने कहा—मुझे ले जाना चाहता है तो चार पैसे तो कमाकर ला । सिर्फ मारेगा ही या खाने को भी देगा । कहने लगा कोशिश तो करता हूँ, कुछ न बने तो क्या करूँ ? मैंने कहा—तो फिर मुझे ले जाकर क्या करेगा ? सारी दुनिया मजूरी करती है, तू क्यों नहीं करता । पेट तो खाने को मांगेगा ।—सच कहती हूँ, मरजाना, इस पर वह बोला नहीं चुपचाप चला गया । असल में आठ जमातें पढ़कर टोकरी ढोते उसे शर्म आती है । बाप मर गया और सिखाया किसी ने कुछ है नहीं ।

मरजाना—तुम्हारी अम्मा तो कह रही थीं कि उसने तुम पर भी टकुआ चलाया ।

भरी—टकुआ चलता तो मैं यहाँ बैठी रहती । वह तो योंही मौशी ने शोर मचा दिया ।

[दोनों कुछ क्षण आग सेंकती हैं । मरजाना फिर उद्विग्न हो उठती है ।]

मरजाना—मेरे दिल पर सुबह ही से भारी बोझ है । भरी ! जाते-जाते कहने लगा—मरजी, यदि मैं आज ही मर जाऊँ तो फिर !

[सहसा फिर आँखें छलछला आती हैं ।]

भरी—[उसके कंधे पर प्यार से हाथ फेर कर] तुम तो पागल हो, अल्लाह रहम करेगा ।

मरजाना—मुझे उसी समय से न जाने कैसे-कैसे ख्याल आ रहे हैं । दिल धक-धक कर रहा है, और जी जैसे सुबह ही से रोने रोने को हो रहा है । आज रहीम खैरियत से आ जाय तो पीर खुलाब शाह की कब्र पर सवा रुपया चढ़ाऊँ ।

[दरवाजा खुलता । आगे-आगे चौधरी फिर अचेत से रहीम को उठाये दो आदमी, फिर बेगां और फिर उसके पीछे अन्य व्यक्ति प्रवेश करते हैं । मरजाना घबरा कर रहीम की ओर बढ़ती है ।]

बेगां—अन्दर जाओ, देखती नहीं हो, गैर आदमी आ रहे हैं ।

[दोनों लड़कियाँ भाग कर रसोई-घर में चली जाती हैं । एक व्यक्ति आँगन में पड़ी चारपाई ठीक करता है । बेगां भाग कर अन्दर से पुरानी सी दुलाई लाने जाती है ।]

मरजाना—(जब बेगां, अन्दर से दुलाई लाकर गुजरती है) अम्मा ?

बेगां—(चारपाई पर दुलाई बिछाती हुई) घबराओ नहीं । अल्लाह ने बचा लिया है । सिर्फ भारी चोट आयी है ।

[दुलाई बिछा देती है । अचेतप्रायः रहीम को उस पर लिटा दिया जाता है । चौधरी उसके हाथ पाँव आदि ठीक तरह रखता है और बेगां से कहता है ।]

चौधरी—मरजी की माँ । अन्दर से लिहाफ लेकर इस पर डाल दे, सर्दी कड़ी है ।

(बेगां कोठरी में जाती है ।)

चौधरी—(मुड़कर भीड़ में देखते हुए) अरे कोई मुस्तार दीनदार को बुलाने गया है या नहीं !

एक व्यक्ति—ताफी डाक्टर को बुलाने गया है ।

चौधरी—अरे डाक्टर क्या खाकर मुस्तार का मुकाबला करेगा । मुस्तार

टूटी हड्डियों की किरचों तक को जोड़ दे । जा भागकर बुला ला उसे ।

(वह व्यक्ति भाग जाता है)

चौधरी—(भीड़ में देख कर) और फिर वहाँ जाने कितने जख्मी पड़े हैं । डाक्टर किस किस को देखेगा ।

बेगां—(रहीम पर भुंकते हुए) रहीम, बेटा रहीम !

चौधरी—तुम उसे आराम से पड़ा रहने दो बीबी । जाकर मीठे तेल का प्रबन्ध करो, आग जला दो, पानी गर्म कर दो, शायद डाक्टर ही आ जाय । (मुड़कर) अरे यार कोई भागकर कुछ गर्म गर्म दूध तो लाओ ! इसे कुछ होश तो आय । (एक युवक से) अरे जलाल जा तो जरा भाग कर गूजरो के यहाँ !

(जलाल भाग कर जाता है)

रहीम—(कराह कर) चाची""मरजानी !

बेगां—बेटा !

चौधरी—मैं कहता हूँ मरजी की अम्मा, तुम मीठा तेल लाओ, मुख्तार अभी आ रहा होगा । इस अंगीठी में और कोयले डालकर इसे यहाँ रख दो ! रमोई-घर में आग जरा तेज कर दो ! जरूरत ही पड़ जाय कुछ चीज गर्म करने की ।

[बेगाँ अंगीठी उठाकर जाती है]

—:(दीर्घ निश्वास छोड़कर) कुछ मकान गिरा है, सारी की सारी छत आ रही । यह ठेकेदार सब हराम की कमाई खाते हैं । पीर गुलाबशाह की खानकाह को बने, जाने सौ साल से ज्यादा हो गये हैं, पर मजाल है जो एक ईंट भी हिली हो । यहाँ चीज बनती पीछे है, मरम्मत पहले शुरू हो जाती है । जाने कितने आदमी दब गये ? (सहसा मुड़कर) क्यों भाई बाकियों का क्या है ?

दो व्यक्ति—[जो रहीम को उठाये लाये थे] हमें क्या मालूम । हम तो

इसे उठा कर ले आये । अभी तो मलवा हटाया जा रहा है ।

सादिक और मंगू भी तो थे ?

चौधरी—कौन सादिक ? लोहार !

वे दोनों—नहीं, रजी का दामाद ।

चौधरी—लेकिन वह...

वे दोनों—आज ही काम पर गया था ।

[दरवाजा खुलता है । कुछ और आदमी हाँफते हुए प्रवेश करते हैं ।]

चौधरी—क्यों ?

एक आगंतुक—सादिक मर गया ।

[रसोई घर में से किसी के धड़ाम से गिरने की आवाज आती है ।

साथ ही मरजाना चीखती है ।]

मरजाना—भरी को गश आ गया है अम्मा !

चौधरी—अरे कोई भाग कर कुछ दूध ले आओ ।

[जलाल दाखिल होता है ।]

जलाल—गूजर कहते हैं—दूध कहाँ है, दूध तो सब देवनगर चला जाता है बच्चों तक के लिए नहीं रहता ।

स्ट्राइक
श्री भुवनेश्वरप्रसाद

हिन्दी के प्रसिद्ध नवयुवक नाटककार हैं। आपके नाटकों में युवक का जोश और वर्तमान समाज के प्रति घृणा स्पष्ट और उभर कर सामने आती है। आधुनिक सभ्यता का खोखलापन और मध्यवर्ग के अन्दर ऊपरी दिखावे की प्रवृत्ति के चित्र प्रस्तुत करने में आप विशेष रूप से सफल रहे हैं। आपकी भाषा पात्रानुकूल और भावानुकूल होती है। तीखा और पैनापन उसका अपना गुण है।

प्रस्तुत 'स्ट्राइक' नाटक में आपने मध्य-वर्गीय समाज का चित्र खींचा है। एक साधारण घटना को लेकर सफल लेखक ने वर्तमान सभ्यता की पोलें और खोखलेपन का भ्रम खोल दिया है।

नाटक के पात्र

पहला दृश्य

पुरुष (श्रीचन्द)
स्त्री

दूसरा दृश्य

तीन पुरुष
एक युवक
पुरुष (श्रीचन्द)

तीसरा दृश्य

पहले दृश्य का पुरुष
दूसरे दृश्य का युवक

पहला दृश्य

[एक मध्यवर्गीय बँगले के खाने का कमरा, जो बरामदे में परदे डालकर बना लिया गया है । एक बड़ा-सा साइड टेबिल जिस पर चीनी के बरतन, प्लेट-प्याले नुमायशी ढङ्ग से रखे हैं; पास में एक छोटी मेज पर फोर्क, क्वाकरओटस, पॉल्सन बटर और आचार के दो अमृतबान सजे हैं । खाने की मेज अंडाकार है, जिसके चारों तरफ चार कुर्सियाँ पड़ी हैं । दो पर एक स्त्री और एक पुरुष बैठे हैं, पुरुष, सुपुरुष, स्त्री, कुछ बोले तो पता चले, कम से कम दस मिनट से खामोश तीसरे पहर की चाय पी रही है ।]

स्त्री—(चाय का प्याला घुमाते हुए) तो सरदार साहब बहुत चौंके ?

पुरुष—(अनमना) हैं.....

स्त्री—(कुछ कहने के लिए साँस भरकर रह जाती है)

पुरुष—तो आज नौकर दोनों छुट्टी ले गये हैं ?...

स्त्री—(दो घूंट चाय पीकर रुमाल से ओंठ पोंछती हुई) सरदार साहब की डाइरेक्टरों में तो खूब चलती है...

पुरुष—(हास्यास्पद उत्साह से) यह ! यही तो इन कमबख्तों को मिटा देता है । यह समझते हैं कि बहुमत इन्हें गदहे से बछड़ा बना देगा ! कमबख्त यह नहीं समझते कि अब बहुमत के माने ही बदल गये हैं ! बहुमत थोड़े से बेजरर, अघमरे केचुओं का नाम थोड़ा ही है ! वह शक्ति, दुनिया को हिला देने वाली शक्ति का नाम है और वह हमेशा एक आदमी—एक आदमी में होती है ।

[स्त्री चुपचाप चाय उँडेलती है और दूध डालकर ध्यान से प्याले को देख रही है। पुरुष रोटी पर बेंरहमी से मक्खन लगा रहा है और कुछ देर खामोशी-सी हो जाती है।]

पुरुष--सरदार साहब, राजा साहब, बाबू साहब, सबके साथ यही दिक्कत है ! कम्बख्त जीवन की कला नहीं जानते, अग्रिमामन से निहत्थे पाजियों की तरह यह मौत तक खिसकते जाते हैं ? जब उन्होंने देखा कि मैं उनसे भीख नहीं माँगता, उनके तलवे नहीं सहलाता, ग्रह नहीं बनाता, पड्यंत्र नहीं करता तो मुँह बा कर रह गए ! जी हाँ, मुँह बा कर रह गए ! (प्याला रखकर हंसता है) यह कुछ बूझते समझते तो हैं नहीं । जब कभी इनके ठोकर लगती है, तो बस खड़े होकर मुँह बा देते हैं (आवाज धीमी करता है) लेकिन कपड़ों के नीचे यह सब इज्जतदार मोटे छुड़मुँहे, गधे हैं गधे । हाँ व्यवस्थित समाज में इनका एक लाभ जरूर है—यह ठोकरें खूब भेल लेते हैं ! डिविडेन्ड कम हुआ, इनके हाथ-पाँव फूल गये हैं; किसी कालिज के चिचिल्ले ने किताबी अँग्रेजी में स्ट्राइक की धमकी दे दी, इनके हाथ-पाँव फूल गये, यह बौखला गये । (हाथ को नाटकीय ढङ्ग से हिलाते हुए) मैंने साफ ऐलान कर दिया कि मैं तीन साल तक कोई डिविडेन्ड नहीं बाँटूँगा । (भद्दी तौर से अँगूठा दिखाता है ।) अँगूठा कर लो मेरा !

[स्त्री चाय खत्म करके घड़ी की तरफ देखती है और भवों में कुछ घुसपुसाती है, पुरुष बेचारा क्या समझे । वह एकाग्र खाता रहता है । कमरे में फिर निस्तब्धता छा जाती है]

पुरुष—(ऊँचा सा) तो आज नौकर दोनों गायब ? मेम साहब ने चाय बनाई है, पर शाम को क्या होगा ? मेरी तो मीटिंग शायद आठ पर खत्म होगी ।

स्त्री—(रुमाल से उँगलियाँ मलते) मैं.....मैं (सहसा) तो जा रही हूँ ।

पुरुष—कहाँ जा रही हो ? कहाँ ?

स्त्री—(बाहर की तरफ रुमाल हिलाते) वहाँ ?

पुरुष—(बाहर की तरफ देखता है) वहाँ बाजार, शॉपिंग के लिए ?

स्त्री—नहीं मैं तो लखनऊ जा रही हूँ; आखिरी जी० आई० पी० से लौट आऊँगी ।

पुरुष—(अपना आश्चर्य भरसक छिपाते हुए) लखनऊ, जी० आई० पी०, आखिर क्यों ?

स्त्री—(चाय खत्म कर चुकी है) कुछ नहीं ऐसे ही घूमने । सरदार साहब की बीवी है, मिसेज निहाल हैं, मैं हूँ, मिस मित्रर है—उन्हीं को कुछ काम है, न जाने रेडियो लेने जा रही हूँ क्या ?

पुरुष—(उँगली पोंछ रहा है) तो यह कहो ! (रुककर) लेकिन कार क्यों नहीं ले जातीं ?

स्त्री—नहीं, कार—कार नहीं । ज्यादा से ज्यादा जी० आई० पी० से लौट आयेगे । वही शायद आखिरी गाड़ी है ।

पुरुष—(जेब से सोने की जेब-घड़ी निकाल कर और उसे बास्केट पर पोंछकर) तो जी० आई० पी० यहाँ आती है १०-१५ पर, तुम यहाँ १० २५ पर आ जाओगी । कार मैं पम्प पर छोड़ दूँगा—अरे मिलखीराम के पेट्रोल पम्प पर । खाने के लिए यह करना कि मैं कार में टिफिन कैरियर रख लूँगा, तुम स्टेशन से सालन वगैरह ले आना; न होगा रोटियाँ यहीं बन जायँगीं (जेब में घड़ी रख लेता है और जेबें टटोलकर सस्ता सिगरेट केस निकालता है और एक सिगरेट जलाता है । धुआँ छोड़ते हुए) अब सरदार साहब के मिजाज ठिकाने आ जायँगे । कोई उसूल नहीं, कोई हौसला नहीं । भला इसे जिन्दगी कहते हैं ?

स्त्री—तो जी० आई० पी० यहाँ साढ़े दस पर आती है ?

पुरुष—(फिर घड़ी निकाल लेता है और फिर उसे पोंछता है) नहीं १०-१५ पर । और जी० आई० पी० की गाड़ियाँ लेट नहीं होतीं—यह ई० आई० आर० नहीं है । (जैसे कोई अपनी ही चीज का बखान कर रहा हो) दुनिया का भविष्य उचित समय पर उचित काम करने वालों के हाथ में है—दुनियाँ की सारी दौलत, सारा आराम, सारा जस उसका है जो अपनी जगह पर कायम है और काम का जो छोटा हिस्सा उसका है उसे मशीन की तरह पूरा कर रहा है । अमरीका का एक बहुत बड़ा लेखक है बरनार्ड शा, उसने कहा है...

स्त्री—(सहसा ऊबी-सी) मिसेज निहाल ने कहा तो था कि वह अपनी कार भेजेंगी । तुम्हें मीटिंग में कब जाना है ?

पुरुष—(चौंककर घड़ी की तरफ देखता है) साढ़े चार ! तो लो मै चला (गुनगुनाता है) चार बजकर सत्रह—तीन या चार मिनट मुझे ड्यूक कम्पनी में लगेंगे, चार—इक्रीस - खैर, तो चलो तुम्हें पिन्डी के यहाँ छोड़ दूँगा; वहाँ से या आग्रो निहाल के वहाँ तक, दो मिनट की ही तो यात है ।

स्त्री—(अँगड़ाई लेते हुए) अच्छा ? (खड़ी हो जाती है) यही साड़ी पहने रहें या दूसरी पहन....(मुड़कर साड़ी देख रही है ।)

पुरुष—(सिगरेट दो-तीन बार चूमकर फेंकते हुए) जैसा तुम्हारा जी चाहे ; लेकिन तुम्हें मेरे सर की कसम, बतला दो लखनऊ में क्या है ?

स्त्री—(बरबस मुस्कराती है) लखनऊ में ?—बहुत सी चीजें—छोटा-बड़ा इमामबाड़ा, चिड़ियाघर, हजरतगंज, अमीना. . . .

पुरुष—नहीं, मैं पूछता हूँ, आज शाम को कोई खास बात ?

स्त्री—(जाते हुए) आज शाम को खास बात ? कोई खास बात नहीं है ।

पुरुष—(जैसे एक बड़ी मुहिम के लिए तैयार होते हुए) यहाँ आग्रो, यहाँ बैठो, (स्त्री घूमकर खड़ी हो जाती है) बैठो, मैं देखता हूँ, तुम

कुछ दिनों से ऐसी ही हो रही हो। मैं जानता हूँ, तुम्हारी यहाँ तबियत नहीं बहलती; पर छुट्टियों में निर्मल आ जायगा। मोनी भी शायद यहीं आवे। तुम्हें मालूम हुआ, मोनी अब की बी० ए० में फर्स्ट रही। लेकिन हाँ, बताओ तुम्हें हुआ क्या है?

स्त्री—होता क्या? कुछ नहीं हुआ; तुम अगर मेरी तबियत का एक खाका बनाओ तो लकीर वहाँ... वहाँ बिजली तक पहुँच जाय!—

पुरुष—(उत्साहित होकर) हाँ लेकिन फिर यह बेताबी क्यों है? देखो आदमी के सामने बड़ी समस्या यह है कि वह अपनी बची-खुची शक्ति किस तरह काम में ले आये? आदिम जंगलीपन से लेकर आज तक की सभ्यता तक जो कुछ भी आदमी ने अपने को दुखी या सुखी बनाने के लिये किया है, वह इस शक्ति को काम में लाने के लिए। फिर दुख या सुख तो इतनी ठोस चीज है कि एक दिन तुम देखोगी कि यह शीशियों में बिका करेंगी, शीशियों में! मुझे इन टिमुये बहाने वालों से नफरत है, सख्त नफरत! यह सिर्फ हरेली ही नहीं है, यह तो अपनी हार के गीत गाते हैं, नारे लगाते हैं।

स्त्री—अच्छा उठो, फिर मुझे कार पर न पहुँचाओगे?

पुरुष—(फिर घड़ी निकालता और उसे पोंछता है) असम्भव। तुम अब मिसेज़ निहाल का इन्तज़ार करो।

[पुरुष जल्दी से भीतर चला जाता है, स्त्री वहीं बाहर की तरफ घूमती हुई बैठी रहती है। थोड़ी देर में पुरुष भीतर से आता है, बगल में पुराना फ़ैट हैट दाबे, हाथ के छोटे डन्डे को रुमाल से पोंछ रहा है।]

पुरुष—१०-१५ पर तुम स्टेशन आ जाओगी, वहाँ से मिलखीराम तक का रास्ता है ५ मिनट का; १०-२०, यानी १०-३०

तक तुम यहाँ होगी, यानी १०-४० तक हम तुम यहीं इसी टेबुल पर डिनर के लिए बैठे होंगे ! मैं स्टेशन आ जाता, लेकिन मिस मित्तर- तुम व्यर्थ जलोगी । (भद्दी हँसी हँसता है, स्त्री पर जैसे इसका कोई असर नहीं होता) अच्छा चीरियो ;

[पौड़ियों पर से तेजी से उतरता हुआ चला जाता है । स्त्री वैसे ही बैठी रहती है, फिर अनमनी भीतर उठकर चल देती है । स्टेज पर एक बारगी अन्धकार हो जाता है । बीच में दो बार रोशनी होती है जिसमें पूरे सीन में खाली मेज और कुर्सियाँ दिखलाई देती है । घड़ी जिसमें पहले ८-३० बजा है फिर ६ ।]

दूसरा दृश्य

[एक मध्यवर्गीय क्लब का कमरा, तेज तीखी रोशनी हो रही है । मेजों पर ताश और भरी हुई एश-ट्रे बिखरी है कुर्सियाँ भी अनेक चारों तरफ तितर-बितर पड़ी हैं । कोने में एक बड़ी फ्रेंच विन्डो (खिड़की) के सामने सोफों पर तीन आदमी बैठे हैं । सीन में सिर्फ उनकी पीठें दिखाई दे रही हैं । पास ही एक कुर्सी पर सामने की छोटी मेज पर सुरुचि से कपड़े पहने एक युवक बराबर ताश फेंट रहा है । खिड़की के फ्रेम में तारों से खिला हुआ आकाश तस्वीर की तरह बड़ा हुआ है । दीवार की बड़ी घड़ी ८-४५ बजा रही है । कमरे में सब खामोश है, पर निस्तब्धता नहीं है ।]

पहला आदमी—(आवाज वृद्ध-सी है) न मालूम मैं यह मनहूस ब्रिज का खेल क्यों खेलता हूँ ?

दूसरा—(जम्हाई लेता हुआ) क्या किया जाय, आओ कोई और भण्डा ऊँचा करें।

तीसरा—यह लोग आते भी तो नहीं। (कुर्सी पर के युवक की तरफ घूमकर) देखो जी तुम मिश्रित समाज की चर्चा चलाओ....
[दोनों आदमी घूमकर युवक की तरफ देखते हैं। तीनों आदमी मोटे अंधेड़, कीमती कपड़े पहने और अत्यन्त सन्तुष्ट हैं।]

युवक—(भेंपता-सा) मैं कैसे उठा सकता हूँ। हाँ, मेरी पत्नी आती तो मैं जरूर ऐसा करता। देखिए उन्हें.....

[तीनों एक बारगी “हूँ” करते हैं और फिर मुड़के बैठ जाते हैं और खासोश हो जाते हैं। युवक फिर ताश फेंटने लगता है।]

पहला—(जेब से सिगरेट-केस निकालता है और फिर रख लेता है)
चलो भाई, चलें, मुझे तो सुबह से ही काम है।

दूसरा—(मुड़कर घड़ी देखते हुए) यह श्रीचन्द बुत्ता दे गया!

पहला—नहीं भाई, कहीं फँस गया होगा। उसके तो मकड़ी की तरह सौ आँखें हैं।

युवक—वह आयेंगे जरूर, मेरी तो दावत कर गये हैं।

तीनों—(मुड़कर) अच्छा? और पट्टे की पत्नी आज है नहीं।

[सब एक दूसरे की ओर देखते हैं]

युवक—अच्छा! मुझे पता होता तो मैं कभी प्रतीक्षा न करता।

पहला—इसे—श्रीचन्द को देखो, जब यह बकालत छोड़कर व्यापार में आ रहा था, मुझे इसकी सफलता की तनिक भी आशा न थी, पर देखो—आज वह एक कम्पनी का सर्वेसर्वा बन गया है।

[हँसता है।]

दूसरा—(जम्हाई लेता और अँगूठियों वाली उँगली से चुटकियाँ बजाता)

है ।) मैं तो भाई दिन-ब-दिन मानता जाता हूँ कि भाग्य कोई चीज है ।

[युवक ताश रखकर एकाग्र हो, इन लोगों की बातें सुनता है ।]

तीसरा—(उठ खड़ा होता है) आओ भाई, चलो । आइए मिस्टर सहाय, आपको कार पर छोड़ आऊँ । घर तक...

पहला—बैठो न, श्रीचन्द आता ही होगा ।

युवक—और आपसे तो उन्होंने भी कार में छोड़ आने के लिए कहा था

तीसरा—(बैठते हुए) हैं, हैं, तब तो रुकना ही पड़ेगा ।

[युवक कोई भी बात शुरू करने का इरादा करता है ।]

युवक—आज मेरठ-षडयन्त्र का मामला शुरू हो गया ।

तीनों—क्या ? अच्छा !

[तीनों ऐसी बातों की तरफ से उदासीनता दिखलाना चाहते हैं । पर कुछ असफल से हो रहे हैं ।]

पहला—श्रीचन्द ने इनके बारे में खूब कहा !

[हँसता है । सब उसकी तरफ देखकर सुनना चाहते हैं]

पहला—(कोर्ट का कालर ठीक करते हुए) मेरे साथ कमिश्नर से मिलने गया उन्होंने मेरठ की बात चलाई । आप द्यूते ही हिन्दु-स्तानी में—हिन्दुस्तानी में बोले—अरे साहब, इनको तो ऐसे ही छोड़ देना चाहिए, यह तो हम लोगों के खिलाफ है ।

[तीनों पैशनेबल हँसी हँसते हैं, युवक भी उसमें शामिल होता है ।]

दूसरा—हर देश, हर सरकार के सामने समस्या सिर्फ़ यही है कि किस तरह उसके कर, कम-से-कम किये जा सकते हैं । आप कर कम कर दीजिए, प्रजा अपने आप सम्पन्न होगी !

पहला—हम लोगों-सा कोई बेसरोकार आदमी रुस जाकर देखे कि इन

शरीफों ने वहाँ क्या कर दिखाया है कि दुनियाँ भर को रूस के सामने हेय समझते हैं !

तीसरा—यानी, खुदा तक को !

[फिर तीनों ऊबरी सी हँसी हँसते हैं । बाहर कुछ खटका-सा होता है । सब लोग बाहर की तरफ देखते हैं । पहले सीन का परिचित पुरुष सन्तोष और लापरवाही से आता है ।]

पुरुष—(अपना हैट और डराडा एक खाली मेज पर रखते हुए) तो तुम लोग मेरा इन्तजार कर रहे थे ! त्रिज खत्म कर दिया ? दूसरा आदमी—(कमरे के बीच में आते हुए) आज सहाय फिर हार गये ।

पुरुष—(हँसता हुआ) सहाय तुम बड़े हरैले हो !

[अब सब अपनी जगहों से उठकर कमरे के बीच में आ गये हैं ।]

पहला—जीत तो सब तुम्हारे हिस्से में पड़ा है !

पुरुष—अरे भाई, क्या जीत, क्या हार ? यहाँ तो इसका कभी सपने में भी ख्याल नहीं करते । हम तो ईमानदारी से जीना जानते हैं । मैं फिर कहता हूँ, जीवन एक कला है और सबसे बड़ी कला !

तीसरा—(जम्हाई लेते हुए) चलो भाई, बड़ी देर हो गई । (सब घड़ी की तरफ देखते हैं, पुरुष फिर अपनी सोने की घड़ी निकालता है और उसे पोंछता है) चलो, घर तक छोड़ना पड़ेगा ।

[तीनों भीतर जाकर अपना हैट लेते हैं केवल युवक नंगे सिर है ।]

पहला—यह चौकीदार न जाने कहाँ मर जाता है !

दूसरा—कहता है ? क्या खूब ! क्या नई पत्नी कर लाया है, जरा सोचो नई पत्नी !

[सब जवानों की तरह हँसते हैं, सिर्फ युवक कुछ भेंपा-भेंपा सा है और सबसे पीछे बाहर जाता है । बाहर बरामदे से दो या तीन बार

आवाज आती है 'चौकीदार !'; फिर मोटरों के स्टार्ट होने की और फिर खामोशी। स्टेज पर अंधेरा हो जाता है, पर बीच में दो या तीन बार रोशनी होती है और किसानों का-सा बुझा हुआ चेहरा लिये एक चौकीदार मेज भाड़ता और जले हुए सिगरेट बीनता हुआ दिखलाई देता है।]

तीसरा दृश्य

[पहले सीन के कमरे का बरामदा, लम्बा और साधारण से ज़रा ऊँचा। खंभों के पास बड़े-बड़े पाम रखे हैं, खम्बों पर बेलें भी फैली हैं, दरवाजे सब बन्द हैं, जिनके सामने तीन चार बेमेल कुर्सियाँ पड़ी हुई हैं। सीढ़ियों पर एक बड़ा भवरा कुत्ता लेटा है। दृश्य के शुरू में कोई आदमी नहीं दिखलाई देता, पर तत्काल ही गृहधामी और युवक जो क्लब से आ रहे हैं; सीढ़ियों पर चढ़ते दिखलाई देते देते हैं। कुत्ता सिर उठाकर धीमी जानकारी से गुर्राता है, फिर पूँछ हिलाता हुआ पीछे-पीछे दौड़ता बरामदे में लेट जाता है। स्टेज पर कम से कम रोशनी है।]

पुरुष—(मेहनत से चढ़ते हुए) तो यह कहिए ? (जेब टटोलता है)
रुकिए.....

[पुरुष एकबारगी सीढ़ियों से उतरकर बंगले के पीछे की तरफ जाता है। युवक वहीं खड़ा होकर उसकी ओर उत्सुकता से देखकर मुस्करा रहा है। शीघ्र वह फिर वापस आ जाता है और उतावली से जेब टटोलता है।]

पुरुष—अब यह नहीं पता, मेरी पत्नी चाभी मुझे दे गई या कहीं रख गई ? नौकर...मैं कहता हूँ कि मेरी जिन्दगी में अगर कोई सुर बेसुरा है तो यह नौकर। छुट्टी-छुट्टी छुट्टी, रोज रोज इनको छुट्टी चाहिए, कम्बख्त यह नहीं जानते....

[युवक सहसा एक कुर्सी खींचकर बैठ जाता है। पुरुष स्विच टटोलकर बत्ती जला देता है और फिर दूसरी कुर्सी पर ठीक युवक के सामने जाता है !]

—(एकबारगी हँसता हुआ) अगर स्विच कमरे के भीतर होता तो लुप्त आ जाता !

युवक—खैर यहाँ भी तो आराम से बैठे हैं।

पुरुष—शायद ६—३० बजा है, (घड़ी निकालता है और उसे पोंछता है) ६—२७, खैर, मेरी पत्नी यहाँ १०—३० तक आ जायगी। खाना वह साथ ही लायेगी। (जम्हाई लेता है) और कहिए।

युवक—(उत्साह से) मुझे कोठी तो खैर मिल गई.....

पुरुष—(जूते को फटफटाते) खैर कोठी-ओठी तो है, आपने यह नहीं बताया कि आपने शादी क्यों नहीं की ?

युवक—(कठिनता से) नहीं ही की—नहीं का कोई कारण तो है नहीं।

पुरुष—(मुस्कराता है) मैं सच सच कहता हूँ, मैं आप जवान आदमियों को देखकर कई बार बहुत खुश होता हूँ।

युवक—(जैसे इसके लिए बिल्कुल तैयार नहीं है) जी हाँ।
(हँसता है।)

पुरुष—(सँभलकर) नहीं। मैं आपसे दिल्लगी नहीं कर रहा हूँ। आप लोग हम से एक पीढ़ी आगे हैं, पर अगर आपसे हिसाब माँगा जाय तो आपके पास क्या है ? आप मुझे बतलाइए, आप लोगों ने दुनियाँ को क्या दिया ? मैं वैज्ञानिक आविष्कारों की बात नहीं करता, उसकी तो एक पूरी स्कीम है, जिसमें पीढ़ियों और समाज का कोई दखल ही नहीं है, वह तो प्रकृति धीरे-धीरे अपने आप पूरा कर रही है। मैं जानता हूँ, आप मेरे विचारों को दकियानूसी समझकर मन ही मन हँस

रहे हैं, लेकिन भाई जान, आपने कौन से तीर मारे हैं ? आप बताइए ?

युवक—जिन्हें तो शादी का था ?

पुरुष हाँ, हाँ शादी को ही लीजिए। आप मानते हैं कि हर एक आदमी को जाति की जिन्दगी में दाखिल होना जरूरी है। जैसा मैं प्रायः कहता हूँ कि दुनिया साभे की दुकान है और हर एक बालिग आदमी का कर्तव्य है कि उसका साभेदार हो। अगर इस कोशिश में आप अपनी जान नहीं खपा देते, तो आप मनुष्य कहलाने का कोई हक नहीं रखते। (उत्ते-जित होकर) मैं कहता हूँ, सब पुस्तकें गलत हैं, सब झूठी हैं !

युवक—मैंने तो शादी नहीं की—नहीं की कि मैं शायद कभी भी औरत का दिमाग.....

पुरुष—भाई जान, शादी एक पुरी समस्या है, आप उसके साथ खिलवाड़ नहीं कर सकते। मैं पूछता हूँ, आप एक फैक्टरी में तो हर तरह का विज्ञान, कानून, विशिष्ट ज्ञान लगाते हैं। फिर क्या कारण है कि जीवन को ऐसे परमात्मा के भरोसे छोड़ दिया जाय कि उसमें आदमी की सस्ती से सस्ती और निकम्मी से निकम्मी शक्तियाँ ही सिर्फ काम में लाई जायं ! आप कहते हैं मैं औरत को समझ नहीं पाता। जनाव, यह सब कोरी बातें हैं बातें। समझने की क्या जरूरत है ? मशीन की एक पुली दूसरी पुली को नापने, जोखने, समझने नहीं जाती। स्त्री-पुरुष तो जीवन की मशीन के दो पुरजे हैं—दो !

युवक—यह फैक्टरी और मशीन की एक ही रही !

पुरुष—नहीं साहब, आप मुझे देखिए, मेरी पहली पत्नी थी। कम्बख्त को हमेशा मुझसे शिकायत रही, लेकिन उसकी बीमारी में जब मैं प्रतिक्षण उसके सिरहाने रहा तो मेरा नाम रटती हुई मरी। अब यह मेरी दूसरी पत्नी है। हमारे बच्चे नहीं, यानी इस

पत्नी के। हम लोग क्लबों में साथ साथ नहीं जाते, हफ्ते में एक बार सिनेमा देखते हैं, पहाड़-जंगल जाने का मेरे पास वक्त नहीं, पर हम लोग बेहद खुश हैं—कभी हम में कोई भेदभाव हुआ ही नहीं। मैं कहना चाहता था कि हम दोनों ने अपनी-अपनी जगह को समझ लिया है और वहाँ हम लोग अडिग हैं। वह बीमार पड़ती है, मैं डाक्टरों से घर नहीं भर देता; मैं बीमार पड़ता हूँ, वह रोती-धोती नहीं। मैं क्या कहूँ ? मैं जानता हूँ इस वक्त मेरी पत्नी स्टेशन के बुकस्टाल पर कौनसी किताब देख रही है। मैं जानता हूँ, वह स्टेशन पर गाड़ी से दस मिनट पहले पहुँच जाती है।

युवक—पर मान लीजिए, मशीन का एक पुरजा बिगड़ जाय।

पुरुष—(हँसता हुआ) तो पुरजा बदल डालिये, स्वयं बदल जाइए।

किताबें ? मैं आपको बताऊँगा, किताबें क्या हैं ? मैंने रुई के व्यापार पर एक छोटी सी पुस्तक लिखी। वही सब बातें लिखी जो लोग रोज सोचते थे। और जिनकी चर्चा करते रहते थे। नतीजा यह हुआ कि किताब की धूम मच गई, पर उन्हीं उसूलों को जिनकी मैंने वकालत की, काम में लाने की बात में स्वप्न में भी नहीं सोचता।

[पुरुष सहसा यह आशा करके कि युवक कुछ कहेगा, चुप हो जाता है। युवक सिर झुकाये हुए खामोश है। कुत्ता इतना शोरगुल सुनकर पास आकर खड़ा हो गया है। कुछ देर के लिए खामोशी हो जाती है।]

युवक—(सिर उठाकर) फैक्ट्री, पुरजा, वाकई यह खूब रही !

[पुरुष कुछ कहने के लिए तैयार होता है; पर फाटक खटकता है और कुत्ता भौंकते हुए दौड़ता है। वह कुत्ते को बुलाता है और बरामदे के किनारे खड़े होकर जोर से पुकारता है। एक चपरासी हाथ में बाइ-सिकिल थामे आता है और सलाम करके जेब में से एक लिफाफा निकाल कर देता है और फिर सलाम करके खड़ा हो जाता है।]

पुरुष—क्या है, तुम कौन हो ? (लिफाफा लेकर अपनी घड़ी की चेन को चाकू से उसे खोलता है —रोशनी की तरफ जाता है) ऐं !

चपरासी—मैं निहाल साहब का ड्राइवर हूँ, मेम साहब ने कहलाया है, वह कल आयेंगी ।

पुरुष—(खत पढ़ना छोड़कर) कल आयेंगी ? ऐं ! तुम्हें क्या मालूम...?

चपरासी—सब मेम साहब वहाँ रहेंगे, मोटर वापिस कर दी; मुझसे कहा—

पुरुष—(टहलते हुए उतावली से) और खाना, मकान और कार मेरी मिलखीराम के पम्प पर खड़ी है !

[चपरासी फिर सलाम करता है और चल देता है, थोड़ी दूर चलके कहता है—]

चपरासी—हुजूर आपका कुत्ता बड़ा पानीदार है । अँग्रेजी है ?

पुरुष—(हताश भाव से) आखिर—आखिर हैं ।...

युवक—(उठते हुए) आइए, मेरे होटल में आइए, आपकी फैक्ट्री में तो आज स्ट्राइक हो गई !

पुरुष—मैं कहता हूँ, मेरी कार मिलखीराम के पम्प पर खड़ी है--

[फिर खत बत्ती के नीचे ले जाकर पढ़ता है ।]

झाप

—————

लेखक-परिचय

डा० रांगेय राघव, जन्म १९२३ ई० अनेक पुस्तकों के
प्रणेता । नाट्य-रचनाएँ: स्वर्गभूमि का
यात्री और रामानुज ।

[भरत मुनि के नाट्यशास्त्र में नाट्योत्पत्ति की कथा के विवरण में भरत अत्रि को बताते हैं कि प्राचीन काल में ब्रह्मा ने देवों की प्रसन्नता के लिये नाट्य वेद बनाया था । ११ वीं शती में शारदातनय रचित भाव प्रकाशनम् के दशम् अधिकार में संगीत की उत्पत्ति की कथा के वर्णन में सूर्य स्वयंभूमनु को बताते हैं कि महाविष्णु के आदेश से ब्रह्मा ने शिव से सङ्गीत, गंधर्व विद्या और नाट्यवेद की शिक्षा ग्रहण करके भरतमुनि को सिखायी थी । प्रस्तुत एकांकी में दोनों कथाओं को मिला कर प्रस्तुत किया गया है ।

नाटक का प्रारम्भ

पात्र—

ब्रह्मा

शिव

नन्दी-शिव का गण

इन्द्र—देवराज

भरत—मुनि

अत्रि—”

स्वयंभू मनु : प्रजापति

[अन्य : गंधर्व, अप्सरा, नर्तक नर्तकियाँ,
मुनि आदि यथा सामर्थ्य रखे जा
सकते हैं। वस्त्र, वेपभूषा प्रचलित
ही हैं। रंगमंच बहुत
साधारण है :—]

प्रकाश का प्रबंध : नेपथ्य

तीसरा पर्दा—सफेद

प्रवेश प्रस्थान
मार्ग

(ब्रह्मलोक इत्यादि)

प्रवेश
प्रस्थान मार्ग

दूसरा पर्दा—सफेद

प्रवेश प्रस्थान
मार्ग

(देवलोक इत्यादि)

प्रवेश
प्रस्थान मार्ग

पहला पर्दा—सफेद

प्रवेश
प्रस्थान मार्ग

(मनुष्य लोक)

प्रवेश
प्रस्थान मार्ग

फुट लाइट

दर्शक

[आगे के दोनों पदें खुले हैं। ब्रह्मलोक में ब्रह्मा, चतुरानन नहीं, एक मुख वाला, उदास सा घूम रहा है। तीसरे पदों पर जल्दी-जल्दी प्रकाश पड़ता है और बुझ जाता है, यह ब्रह्मा की दृष्टि में दिन और रात का हिसाब दिखाने को काफी है। फुटलाइट मद्धिम हैं।]

ब्रह्मा—दिन और रात !! रात और दिन !! मेरे ही बनाये हुए, दोनों ही किस व्यापक वेग से भागते चले जा रहे हैं। किन्तु अपनी ही सृष्टि में मेरा आनन्द आज एक आश्रय खोजने के लिये व्याकुल हो उठा है।

[नेपथ्य से जब पदों पर प्रकाश पड़ता है तब आवाज आती है :]

पितामह ब्रह्मा ! आप क्यों व्याकुल हो गये हैं ?

ब्रह्मा—कौन है ? सूर्य बोल रहा है ?

[प्रकाश चला जाता है। अंधकार हो जाता है। स्त्री-स्वर आता है—]

हाँ पितामह ब्रह्मा ! वह सूर्य ही था। अनन्त आकाश में आगे चला गया है। मैं रात हूँ। आपके, महाविष्णु के और शिव के लोक में तो हम अधिक ठहर ही नहीं पाते।

[फिर प्रकाश]

ब्रह्मा—वही फुलझड़ी का सा खेल ! चारों ओर सूनापन ! सृष्टि को बनाने के पहले का वह उल्लास ! वह ममता ! गया सब गया आज केवल एक उबा देने वाली भुंभलाहट शेष रह गई है। (स्वर बदल कर) नहीं, महाविष्णु ने जो कहा है, तो मुझे शिव के समीप अवश्य जाना चाहिये। वे अवश्य मुझे कोई मार्ग दिखायेंगे।

[एक नर्तकी का प्रवेश। जिधर से ब्रह्मा आया है उधर से ही]

ब्रह्मा—तुम कौन हो सुन्दरी !

नर्त्तकी—अरे ! आप यह नहीं जानते ? कैसा आश्चर्य है ! आप शिव लोक में है और आज देवाधिदेव महादेव के मनोरंजन के लिये हम सब गंधर्व अप्सराएँ अपनी सज्जीत विद्या का प्रदर्शन करने यहाँ आये हैं ।

[कुछ अन्य नर्त्तक आते हैं । उसी ओर से]

ब्रह्मा—किन्तु मैं यहाँ कब आगया ?

[नेपथ्य से सूर्य का स्वर । धन्य हो पितामह ! आपके लिये काल के व्यवधान का तो कोई अर्थ ही नहीं !]

सब लोग—अरे ! पितामह ब्रह्मा हैं !

[सादर प्रणाम करते हैं ! रंगमंच की दूसरी ओर से शिव अपने प्रसिद्ध रूप में आते हैं । साँपों की आवश्यकता नहीं है, न गङ्गा और चन्द्र की ही ।]

शिव—स्वागत प्रजापति ! स्वागत !

ब्रह्मा—प्रणाम देवाधिदेव महादेव ? (बढ़कर) जीवन भार हो गया है देव ! इस सृष्टि के व्यामोह ने मुझे स्वयं ग्रस लिया है । महा-विष्णु से मुक्ति का मार्ग पूछा था । किन्तु क्या बताया उन्होंने, कहा देवाधिदेव शङ्कर से जाकर पूछो । बताइये देव ! आप तो श्मशान में निर्वृन्द घूमते हैं और फिर जाकर कैलाश पर समाधिस्थ हो जाते हैं । मेरी रक्षा करिये ।

शिव—(मुस्करा कर) शांत हो प्रजापति ! इन गंधर्वों के पास सज्जीत विद्या है, जो जीवन के भारी क्षणों में ऐसी मादकता भरती है कि फिर हृदय सारे कल्मषों को भूल जाता है । नन्दी !

नन्दी—देवाधिदेव !

[मनुष्य रूप में उधर से प्रवेश करता है जिधर से शिव आये हैं ।]

शिव—हम प्रजापति ब्रह्मा को कैलाश ले जा रहे हैं, जहाँ इनका पूर्ण सम्मान करने के लिये उमा हैमवती बैठी होंगी । तब तक तुम

इन गन्धर्वों से समस्त नृत्यगीत की विद्या प्राप्त करो और
आकर ब्रह्मा को बता दो, किसी प्रकार अतिथिदेव का हृदय
तो प्रसन्न हो !

एक नर्त्तिक—देवाधिदेव ! यह आपका लोक तो विचित्र है । यहाँ यह
सूर्य का जल्दी जल्दी आना और चला जाना एक व्याघात है।
शिव—तुम देव-लोक में जाकर आनन्द करो । लौटते समय ब्रह्मा वहीं
आजायेंगे !

नन्दी—जो आज्ञा ।

[उसी ओर शिव और ब्रह्मा का प्रस्थान ।]

नन्दी—चलो !

[सब बढ़ते हैं । प्रकाश क्षीण होता है । नर्त्तिक नर्त्तकियाँ
और नन्दी रंगमंच के अगले भाग में आते हैं । दूसरा पर्दा
गिरता है । सूर्य का प्रकाश नये पर्दे पर काफी देर तक
दीखता है, फिर देर तक बुझता है । यही क्रम चलता है ।

नन्दी—[सब से] स्वामी की आज्ञा हुई है । किंतु क्या यह कठिन
विद्या मैं सीख सकूँगा ।

१ गन्धर्व—नटराज का सेवक कैसी बात पूछ रहा है । जिसके डमरू के
प्रतिध्वनित होने से दिगंत में अक्षुण्ण प्रवाह अपने आप
भूमने लगता है ! और कौन सा राग है जो तुमने नहीं सीख
लिया ?

नन्दी—देखो ! देखो ! जब से देव, दानव, यक्ष और नाग देवलोक को
छोड़कर जम्बूद्वीप पर चले गये हैं और आपस में भगड़ा कर
रहे हैं, तब से देवलोक का आनन्द ही चला गया है ।

गंधर्व—छोड़ो भी । सुन्दर तरुण और तरुणियाँ अधीर होने वाले हृदय
को भावावेश से लिये खड़े हैं । मनोरंजन होने दो ।

नन्दी—जितना सीखता हूँ उतना ही हर्ष प्राप्त होता है ।

गंधर्व—नन्दी ! आओ आज हम ऐसा सङ्गीत सुनाएँ, ऐसा नृत्य

दिखायें कि सृष्टि के रोम-रोम में आनन्द पुकारने लगे ।

[अप्सराएं नृत्य करती हैं । गन्धर्व गाते हैं । कुछ देर बाद नन्दी भी गाता है ।]

[गीत]

नाचो हे सकल सृष्टि बरसे रस धारा
जागे नूतन प्रकाश, हटे तिमिर कारा
गूँजे आनन्द मंदिर,
संजीवन लें पुकार,
भूमे तन्मय विभोर, लोक मुग्ध सारा !

[नृत्य और गीत समाप्त होता है । जिस ओर ब्रह्मा गया था उसी ओर से प्रवेग करता है ।]

ब्रह्मा—धन्य हो नन्दीश्वर ! धन्य हो अप्सराओ और गन्धर्वों ! आज मेरा हृदय सचमुच गद्गद हो रहा है । सृष्टि को बनाकर भी मुझे इसमें एक सूनापन मा लगा करता था । किन्तु तुमने अपने सामूहिक जीवन में जो लय-ताल भरी महिमा उत्पन्न करली है, वह न जाने क्यों मुझे एक अपूर्व शान्ति देती है ?

नन्दी—प्रजापति ! आप स्वामी का आतिथ्य स्वीकार करके आ भी गये !

ब्रह्मा—(हँसकर) देवलोक में हो नन्दीश्वर ! विष्णु, शिव और ब्रह्मा के लिये तो देवलोक में ये देर-देर में दिखाई देने वाले दिन-रात पल-पल की भाँति बीत जाते हैं । और मनुष्य लोक के तो युगों के बीतने पर भी हमें पता नहीं चलता । मैं तो तुम्हारा गान सुन रहा था, यहीं इस ओर खड़ा-खड़ा । तुम धन्य हो । यह विद्या मुझे दो नन्दीश्वर ! सृष्टि करने वाला ब्रह्मा आज तुमसे दान माँग रहा है !

नन्दी—लज्जित न करें देव ! आप प्रजा का हित करना चाहते हैं । आपको कुछ भी अदेह नहीं है । जिससे लोक का मनोरंजन

हो वह आपके चरणों पर समर्पित है। आज से यह विद्या आपकी हुई। आप इसका चाहे जैसा प्रयोग करें।

[ब्रह्मा प्रसन्न होते हैं। सब प्रणाम करते हैं। नन्दी एक ओर जाता है, और जिस ओर से नर्तक-नर्तकी आये थे उसी मार्ग से चले जाते हैं।]

ब्रह्मा—संगीत ! सृष्टि के कण-कण की गति जो नाद उठाती है वही तो संगीत है ! समस्त सत्ता का राग जब गूँजता है तब वही तो आनन्द का माध्यम बनता है !

[जिस ओर से नर्तक-नर्तकी जाते हैं, उधर से इन्द्र का प्रवेश ।]
ब्रह्मा—कौन ? देवराज इन्द्र !

इन्द्र—(प्रणाम करके) देवराज नहीं ब्रह्मा ! मैं व्याकुल हो रहा हूँ। मुझे एकान्त चाहिए। मुझे मेरे मन का सूनापन खाये जा रहा है।

ब्रह्मा—क्यों ?

इन्द्र—मैं नहीं जानता प्रजापति ! मैंने स्वर्ग में आनन्द किया, पृथ्वी पर जम्बूद्वीप पर अधिकार किया, दानव, यक्ष और नागों से घोर युद्ध करके, समुद्र मथकर, विजय प्राप्त की, किन्तु नहीं, कहीं भी शान्ति नहीं मिली। पृथ्वी पर लूट मची हुई है। किसी भी भाँति विपमता का अन्त ही नहीं हो पाता। वरुणों का विभाजन हो गया है। परस्पर एक दूसरे से घृणा है। वेद पर अधिकार रखने वाले उच्चवर्ण मदांध हैं और मिमन्-वर्णों को तो कोई आनन्द ही नहीं रह गया है।

ब्रह्मा—शान्त हो देवराज ! मैंने जब सृष्टि का निर्माण किया तब मैंने एक बात पर ध्यान नहीं दिया। बुद्धि का प्रयोग करने वाला प्राणी समूह में रहता है और उसे ऐसे साधन चाहिए जो किसी माध्यम से एक के मन को दूसरे के समीप ले जा सकें।

तुम जाओ देवराज ! मैं इसका कोई उपाय ढूँढ कर निकालूँगा ।

[इन्द्र जिधर से आया था उसी ओर उसका प्रस्थान ।
ब्रह्मा समाधि लगाकर बैठते हैं । नेपथ्य में ऊंकार की गूँज उठती है । ब्रह्मा जगते हैं ।]

ब्रह्मा—कौन बोल रहा है ?

नेपथ्य से—देव मैं ऋग्वेद हूँ । मेरे साथ सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद है । आपने किस लिए हमें स्मरण किया है ?

ब्रह्मा—वेद ! चारों वेद ! ज्ञान के भण्डार तुम्हीं हो । तुमने सुना ! देवराज इन्द्र व्यथित थे ? मैंने संगीत और नृत्य विद्या प्राप्त की है, किन्तु उससे केवल मनोरंजन होता है । वह तो काफी नहीं है ।

सामवेद की नेपथ्य से ध्वनि—देव मैं सामवेद हूँ । मैं भी संगीत हूँ । मैं स्वयं उन स्वरोँ को अपने भीतर धारण करता हूँ । परन्तु और तो मैं भी नहीं जानता ।

ऋग्वेद की नेपथ्य से ध्वनि—देव मैं ऋग्वेद हूँ । मैं बोलने का श्रेश्ठ हूँ आगे का मार्ग मैं नहीं बता सकता ।

यजुर्वेद की नेपथ्य से ध्वनि—प्रजापति मैं जीवन का अभिनय रूप हूँ किन्तु इससे आगे मेरी गति नहीं ।

अथर्ववेद की नेपथ्य से ध्वनि—ब्रह्मा ! मुझ में रस तो है, परन्तु वह आगे का पथ प्रशस्त नहीं करता !

ब्रह्मा—तब चारों वेदों से काम नहीं चल सकता । अच्छी बात है । तुम चारों के चारों अंशों को लेकर मैं इकट्ठा करता हूँ । तुम जा सकते हो ।

नेपथ्य से चारों का स्वर—जो आज्ञा प्रजापति ।

ब्रह्मा—चारों के अंश मेरे पास हैं । किन्तु इससे क्या हुआ । मुझे और कुछ चाहिए । (सोचकर) अरे ! इतिहास ! तू कहाँ है ?

नेपथ्य से—प्रभु ! मैं यहाँ हूँ ।

ब्रह्मा—इतिहास ! तू इन सब तत्त्वों को धारण कर सकेगा ?

इतिहास का नेपथ्य से स्वर—क्यों नहीं प्रभु ! मैं धर्म, अर्थ और काम का केन्द्रीकरण हूँ । यदि मुझे बोलने का अर्थ, गीत का अर्थ, अभिनय का अर्थ और रस का प्राण मिल जाये तो मैं केवल मनोरंजन ही नहीं, ऐसा रूप धारण कर सकूँगा कि संसार के सब कार्य मेरे माध्यम से दिखाये जा सकें । सुन्दर से सुन्दर उपदेश दिये जा सकें, शास्त्रों का ज्ञान मुझमें दिखाई देगा; मनुष्यों और समस्त प्राणियों की कला मुझमें जाग उठेगी और सब ही वर्गों के लोग मुझसे आनन्द प्राप्त करने लगेंगे ।

ब्रह्मा—तो ले ! मैं तुझे नाट्यवेद का नाम देता हूँ । आज से तू अपने नये रूप में पाँचवें वेद के नाम से प्रख्यात हो । तू कहाँ रहेगा ?

नाट्यवेद का नेपथ्य से स्वर—प्रजापति की जय !

ब्रह्मा—अरे ! तेरा स्वर कैसे बदला ?

नाट्यवेद का नेपथ्य से स्वर—देव ! पहले मैं इतिहास था; तब तक मुझमें यह जीवन नहीं था । अब मैं नये रूप में नाट्यवेद के रूप में हूँ । तभी मेरे स्वर में यह अपूर्व मादकता भर गई है ।

ब्रह्मा—मैं तुझे देखना चाहता हूँ ।

नाट्यवेद का नेपथ्य से स्वर—प्रभु ! मैं अपने आप नहीं दीख सकता । मेरे लिये नट और नटी बनाइये । मैं उनके माध्यम से प्रकट

हो सकूँगा। मेरा प्राण कवि के भाव से उत्पन्न होगा, परन्तु मेरी अभिव्यक्ति नट और नटी में ही होगी।

ब्रह्मा—धन्य हो। अब मैं नट और नटी का निर्माण करूँगा।

[समाधि लगाते हैं। पहला पर्दा गिरता है। फुटलाइट बुझती है। एक ओर से मनुष्यलोक वाले भाग में स्वयम्भू मनु, और अत्रि आते हैं। इस पदों के पीछे एक जगह टिका हुआ प्रकाश दिखाई देता है। सूर्य्य वह है।]

स्वयंभू—अरे प्रभात का धीमा आलोक दिखाई दे रहा है !

अत्रि—प्रजापति स्वयंभू मनु ! आप इतने व्याकुल क्यों हैं ?

स्वयंभू मनु—व्याकुल ! मैंने ही इस पृथ्वी पर वर्णों की मर्यादा को स्थिर किया है अत्रि मुनि ! आप देख रहे हैं, मेरा कार्य्य कितना कठिन है। चारों ओर हृदयहीन शासन है। मनुष्य मनुष्य के रूप में आखिर किस प्रकार देखा जाये। क्या मेरी यह तृष्णा कभी भी शान्ति नहीं पा सकेगी !

अत्रि—मैं नहीं जानता।

सूर्य्य का नेपथ्य से स्वर—कार्य्य के भार से व्यस्त स्वयंभू मनु ! तुम भले ही न जानो। भले ही अत्रि मुनि भी नहीं जानें। किन्तु मैं जानता हूँ।

स्वयंभू—तुम कौन हो ?

सूर्य्य का नेपथ्य से स्वर—मैं सूर्य्य हूँ। तीनों लोकों में घूमना ही मेरा काम है। मैं तुम्हारे आनन्द के लिये बताना चाहता हूँ। सुनो यह आवाज सुनते हो !

[नेपथ्य में आनन्द का संगीतमय कोलाहल।]

स्वयंभू—(सुनकर) यह क्या है देव ! सूर्य्य देव ! यह तो एक दिव्य स्वर है । आज तक कभी ऐसा मीठा स्वर नहीं सुना !

नेपथ्य से सूर्य्य का स्वर—यह तो सुनने का ही परिणाम है । अभी तुमने देखा नहीं है । प्रजापति ब्रह्मा ने देवी सरस्वती के सामने नट की कल्पना की । उसी समय उनके सामने पाँच शिष्यों के साथ एक मुनि वहाँ आकर प्रगट हो गये ।

अत्रि—मुनि ! अर्थात् मनन करने वाले !

नेपथ्य से सूर्य्य का स्वर—हाँ, हाँ ! पृथ्वी के ही वासी ! ब्रह्मा ने उन मुनिराज से नाट्यवेद ग्रहण करने को कहा । उन्होंने तुरन्त ऐसा किया और नाटक दिखाकर ब्रह्मा तथा देवों का मनोरंजन किया, जिससे ऐसे उपदेश जागे कि सब प्रसन्न हो उठे । यह तो ज्ञान का भण्डार है । वे मुनि ही भरत कहलायेंगे क्योंकि ब्रह्मा ने उन्हें वर दिया है । उनके नाम पर ही नाट्यवेद अब भारत कहलायेगा ।

अत्रि—किन्तु हम मनुष्यलोक में कैसे उसे पा सकेंगे ? हमारी प्रजा को उसकी अत्यन्त आवश्यकता है ।

सूर्य्य का स्वर नेपथ्य से—मैं मानता हूँ मनुष्य को ऐसे कलात्मक उपदेश की अधिक आवश्यकता है जिससे ज्ञान भी मिले, मन भी रसमय हो, और सबको समान रूप से आनन्द मिले । मनोरंजन के साथ साथ ही बहुजन का मन प्रसन्न हो, और लोक-कल्याण हो । भाव-भूमि मनुष्य को मनुष्य के समीप ले आये ।

[फुटलाइट पूरी तरह जलती है]

स्वयंभू मनु—दिन हो गया ।

अत्रि—यह कैसा कोलाहल है ?

स्वयम्भू मनु—कलह, ईर्ष्या और वैमनस्य ने लोक को ग्रस लिया है ।
क्या इस व्याकुलता से कभी मुक्ति नहीं होगी ?

[भरत का उस ओर से प्रवेश जिधर से स्वयम्भू मनु और अत्रि
नहीं आये हैं ।]

अत्रि—अरे ! महर्षि भरत ! हम आपको प्रणाम करते ।

[दोनों प्रणाम करते हैं]

भरत—व्याकुल न हो अत्रि मुनि ! प्रजापति स्वयम्भू मनु ! अपनी दीनता
का परित्याग करो । मैंने सांगोपांग नाट्य वेद का संपादन
किया है । देखो त्रिभुवन इसके कारण आनन्द से भूम
रहा है ।

[नेपथ्य से सुरीली संगीत ध्वनि सुनाई पड़ती है । दोनों
चौंकते हैं ।]

भरत—ब्रह्मा ने मुझे स्वयं नाट्य वेद दिया है । मनुष्य के समस्त ज्ञान
का संचय नाट्यवेद मेरे पास है जिस पर किसी वर्ग विशेष
का अधिकार नहीं । सबके लिये वह समान है । मनुष्यमात्र
की भावभूमि को समान रूप से सुन्दरतर बनाने का ज्ञान मेरे
पास है । सकल पृथ्वी पर आनन्द स्थायी रहे, इसीलिए यह
ऐसा ज्ञान है, जो एक बार में ही समाप्त नहीं हो जाता, बार
बार मनुष्य की मेधा इसमें नवीन प्राण भरकर, नये नये
रूपों में इसका सृजन कर सकेगी ।

[सहसा पहला पर्दा हटता है, फिर दूसरा भी । पीछे का प्रकाश बन्द हो जाता है ।]

स्वयंभू मनु—[चौंक कर] देव ! यह क्या हुआ ? काल व्यवधान को भुला कर यह मनुष्य लोक, देवलोक और ब्रह्मलोक से कैसे मिल गया !

[ब्रह्मा, शिव, इन्द्र, गंधर्व, अप्सरा, नन्दी, आदि सब रंगमंच पर आते हैं । सब प्रसन्न हैं । मनु आदि प्रणाम करते हैं । वे आशीर्वाद देते हैं ।

भरत—(मुस्करा कर) यह नाट्यदेव का ही चमत्कार है स्वयंभू मनु-अब से मनुष्यलोक ने समस्त लोकों के दर्शन करने की शक्ति प्राप्त कर ली है, जो सबके लिये समान है, और लोक-कल्याण की अमर साधना है । यह बहुजन को आनन्द, मनोरंजन तथा उपदेश देने वाला और ज्ञान धारण करने वाला नाट्यवेद मनुष्य का महान उत्कर्ष है । आगे बढ़ो ! ऊँचे बनो ! कोई रोक बाकी नहीं रही है ।

[स्वयंभू, भरत और अत्रि आगे बढ़ते हैं । देवलोक पार करके वे ब्रह्मलोक पहुँचते हैं ।]

स्वयंभू मनु—अरे ! मैं कितना सुख पा रहा हूँ । मेरी भावनाएँ कितनी उदात्त हो गई हैं । आज देवलोक और ब्रह्मलोक की समस्त दिव्य चेतना मनुष्यलोक को ही मिल गई है !!

[गंधर्व प्रसन्नता से गाते हैं । अप्सराएँ नृत्य करती हैं]

[गीत]

बंध हीन, मुक्त प्राण, चेतन का रूप सार—

खोले उर की समस्त शृङ्खल भर नया प्यार

त्रिभुवन में ज्योति जले

शाश्वत हो विजय सत्य

प्राणों को प्राण आज बीधे हों एक तार ।

[गीत का अन्त होते होते पहला पर्दा खिंच जाता है ।]
